॥ॐ॥
॥ॐ श्री परमात्मने नमः॥
॥श्री गणेशाय नमः॥

# द्वादश ज्योतिर्लिंग

## विषय-सूची


श्री शिव स्तुति ..... 3

द्वादश ज्योतिर्लिंग ..... 5

सोमनाथ ..... 11

मल्लिकार्जुन ..... 23

महाकालेश्वर ..... 28

ओम्कारेश्वर ..... 42

केदारनाथ ..... 45

भीमाशंकर ..... 49

विश्वनाथ ..... 59

वैद्यनाथ ..... 62

त्र्यम्बकेश्वर ..... 66

नागेश्वर ..... 69

रामेश्वरम ..... 73

घुश्मेश्वर ..... 79

## श्री शिव स्तुति

शिवो गुरु: शिवो देव: शिवो बंधु: शरीरिणाम।
शिव आत्मा शिव जीव: शिवादन्यन्न किंचन।।

शिवमुद्दिश्य यक्तिंचियद दत्तं जप्तं हुतं कृतम।
तदनन्तफलं प्रोक्तं सर्वागम विनिशिचतम ।।

सा जिह्वा या शिवं स्तौति तन्मनो ध्यायते शिवम्।
तौ कर्णौ तत्क्थालोलौ तौ हस्तौ तस्य पूजकौ ।।

ते नेत्रे पश्यत:पूजां तचिछर: प्रणतं शिवे।
तौ पादौ यौ शिवक्षेत्रं भक्त्या पर्यटत: सदा ।।

यस्येन्द्रियाणी सर्वाणि वर्तन्ते शिवकर्मसु।
स निस्तरति संसारं भुक्तिं मुक्तिं च विन्दन्ति ।।
भक्तिलेशयुत: शम्भो: स वन्द्य: सर्वदेहिनाम ।।

(स्कन्द पुराण, ब्रह्मोत्तर खंड, ४ )

भगवान् शिव गुरु हैं, शिव देवता हैं, शिव ही प्राणियों के बंधु हैं, शिव ही आत्मा और शिव ही जीव हैं। शिव से भिन्न दूसरा कोई नहीं है। भगवान् शिव के उद्ध्येश्य से जो भी दान, जप,और होम किया जाता है, उसका फल अनन्त बताया गया है। यह समस्त शास्त्रों का निर्णय है। वही जिव्हा सफल है, जो भगवान् शिव की स्तुति करती है। वही मन सार्थक है जो भगवान शिव के ध्यान में संलग्न होता है। वे ही कान सफल हैं जो उनकी कथा सुनने के लिए उत्सुक रहते हैं और वे ही दोनों हाथ सार्थक हैं, जो शिवजी की पूजा करते हैं, वे नेत्र धन्य हैं जो महादेवजी की पूजा का दर्शन

करते हैं। वह मस्तक धन्य है जो शिव के सामने नमन करता है, वे पैर धन्य हैं जो भक्तिपूर्वक शिव के क्षेत्रों में सदा भ्रमण करते हैं। जिसकी सम्पूर्ण इन्द्रियां भगवान् शिव के कार्यों में लगी रहती हैं, वह संसारसागर से पार हो जाता है और भोग तथा मोक्ष प्राप्त कर लेता है।

जिसके हृदय में भगवान् शिव की लेशमात्र भी भक्ति है, वह समस्त देहधारियों के लिए वंदनीय है।

# द्वादश ज्योतिर्लिंग

शिव पुराण के कोटिरुद्र संहिता में वर्णित कथानक के अनुसार भगवान शिवशंकर प्राणियों के कल्याण हेतु जगह-जगह तीर्थों में भ्रमण करते रहते हैं तथा लिंग के रूप में वहाँ निवास भी करते हैं। कुछ विशेष स्थानों पर शिव के उपासकों ने महती निष्ठा के साथ तन्मय होकर भूतभावन की आराधना की थी। उनके भक्तिभाव के प्रेम से आकर्षित भगवान शिव ने उन्हें दर्शन दिया तथा उनके मन की अभिलाषा को भी पूर्ण किया था। उन स्थानों में आविर्भूत (प्रकट) दयालु शिव अपने भक्तों के अनुरोध पर अपने अंशों से सदा के लिए वहीं अवस्थित हो गये। लिंग के रूप में साक्षात भगवान शिव जिन-जिन स्थानों में विराजमान हुए, वे सभी तीर्थ के रूप में महत्त्व को प्राप्त हुए।

शिव द्वारा शिवलिंग रूप धारण

लिंग शब्द का अर्थ है चिन्ह, प्रतीक।

भगवान शिव क्योंकि परमपिता परमात्मा के अंश है और स्वयं ब्रह्मस्वरूप हैं इसीलिए निष्काम (निराकार) कहे गए हैं। इसी प्रकार से रूपवान होने के कारण उन्हें सकल (साकार) भी कहा गया है। साक्षात परब्रह्म शिवजी सकल और निष्कल परमात्मा के दोनो रूप हैं।

शिवजी के निष्कल - निराकार होने के कारण ही उनकी पूजा का आधारभूत लिंग भी निराकार ही प्राप्त हुआ है अर्थात शिवलिंग शिव के निराकार स्वरूप का प्रतीक है। यही कारण है शिवजी की पूजा सकल रूप - अंग आकर से सहित मूर्ति रूप में और निराकार रूप - अंग आकार से सर्वथा रहित चिन्ह के रूप में की जाती है।

लिंग (निराकार) और लिंगी (साकार) रूप को दर्शाता है।

स्वयं महादेव ने शिव महापुराण में कहा है -

"मेरे दो रूप हैं- सकल और निष्कल। पहले मैं स्तम्भ रूप से उत्पन्न हुआ फिर अपने साक्षात रूप से । ब्रह्मभाव मेरा निष्कल रूप है और महेश्वरभाव सकल रूप। ये दोनो ही मेरे सिद्ध रूप है। पहले मेरी ब्रह्मरूपता का बोध कराने के लिए निष्काम लिंग प्रकट हुआ था। फिर अज्ञात ईशृत्व का साक्षात कराने के निमित्त मैं साक्षात जगदीश्वर ही सकल रूप में तत्काल प्रकट हो गया। अतः मुझमें जो ईशात्व है, उसे ही मेरा सकल रूप जाना चाहिये तथा यह जो मेरा निष्कल स्तम्भ (लिंग या चिन्ह) है, वह मेरे ब्रह्मस्वरूप का बोध कराने वाला है।"

वैसे तो शिवलिंगों की गणना अत्यन्त कठिन है। जो भी दृश्य दिखाई पड़ता है अथवा हम जिस किसी भी दृश्य का स्मरण करते हैं, वह सब भगवान शिव का ही रूप है, उससे पृथक् कोई वस्तु नहीं है। सम्पूर्ण चराचर जगत् पर अनुग्रह करने के लिए ही भगवान शिव ने देवता, असुर, गन्धर्व, राक्षस तथा मनुष्यों सहित तीनों लोकों को लिंग के रूप में व्याप्त कर रखा है। सम्पूर्ण लोकों पर कृपा करने की दृष्टि से ही वे भगवान महेश्वर तीर्थ में तथा विभिन्न जगहों में भी अनेक प्रकार के लिंग धारण करते हैं।

जहाँ-जहाँ जब भी उनके भक्तों ने श्रद्धा-भक्ति पूर्वक उनका स्मरण या चिन्तन किया, वहीं वे अवतरित हो गये अर्थात् प्रकट होकर वहीं स्थित (विराजमान) हो गये। जगत् का कल्याण करने हेतु भगवान शिव ने स्वयं अपने स्वरूप के अनुकूल लिंग की परिकल्पना की और उसी में वे प्रतिष्ठित हो गये।

ऐसे लिंगों की पूजा करके शिवभक्त सब प्रकार की सिद्धियों को प्राप्त कर लेता है। भूमण्डल के लिंगों की गणना तो नहीं की जा सकती, किन्तु उनमें कुछ प्रमुख शिवलिंग हैं।

शिव पुराण में वर्णित में वर्णित द्वादश ज्योतिर्लिंग

शिव पुराण के अनुसार प्रमुख द्वादश ज्योतिर्लिंग इस प्रकार हैं, जिनमें नाम श्रवण मात्र से मनुष्य का किया हुआ पाप दूर भाग जाता है।

| | |
|---|---|
| सोमनाथ ज्योतिर्लिंग | प्रथम ज्योतिर्लिंग सौराष्ट्र में अवस्थित 'सोमनाथ' का है। यह स्थान काठियावाड़ के प्रभास क्षेत्र में है। |
| मल्लिकार्जुन ज्योतिर्लिंग | द्वितीय ज्योतिर्लिंग आन्ध्र प्रदेश के कृष्णा ज़िले में कृष्णा नदी के तट पर श्रीशैल पर्वत पर श्रीमल्लिकार्जुन विराजमान हैं। इसे दक्षिण का कैलाश कहते हैं। |
| महाकालेश्वर ज्योतिर्लिंग | तृतीय ज्योतिर्लिंग महाकाल या 'महाकालेश्वर' के नाम से प्रसिद्ध है। यह स्थान मध्य प्रदेश के उज्जैन नाम का नगर है, जिसे प्राचीन साहित्य में अवन्तिका पुरी के नाम से भी जाना जाता है। यहाँ पर भगवान महाकालेश्वर का भव्य ज्योतिर्लिंग का मन्दिर विद्यमान है। |
| ओंकारेश्वर ज्योतिर्लिंग | ओंकारेश्वर ज्योतिर्लिंग चतुर्थ ज्योतिर्लिंग का नाम 'ओंकारेश्वर' या परमेश्रवर है। यह स्थान भी मध्य प्रदेश के मालवा क्षेत्र में ही पड़ता है। यह प्राकृतिक सम्पदा से भरपूर नर्मदा नदी के तट पर अवस्थित है। |
| केदारनाथ ज्योतिर्लिंग | पाँचवाँ ज्योतिर्लिंग हिमालय की चोटी पर विराजमान श्री 'केदारनाथ' जी का है। श्री केदारनाथ को 'केदारेश्वर' भी कहा जाता है, जो केदार नामक शिखर पर विराजमान है। इस |

| | |
|---|---|
| | शिखर से पूरब दिशा में अलकनन्दा नदी के किनारे भगवान श्री बद्री विशाल का मन्दिर है। |
| भीमशंकर ज्योतिर्लिंग | षष्ठ ज्योतिर्लिंग का नाम 'भीमशंकर' है, जो डाकिनी पर अवस्थित है। यह स्थान महाराष्ट्र में मुम्बई से पूरब तथा पूना से उत्तर की ओर स्थित है, जो भीमा नदी के किनारे सहयाद्रि पर्वत पर हैं। भीमा नदी भी इसी पर्वत से निकलती है। |
| विश्वनाथ ज्योतिर्लिंग | काशी में विराजमान भूतभावन भगवान श्री 'विश्वनाथ' को सप्तम ज्योतिर्लिंग कहा गया है। कहते हैं, काशी तीनों लोकों में न्यारी नगरी है, जो भगवान शिव के त्रिशूल पर विराजती है। |
| त्र्यंबकेश्वर ज्योतिर्लिंग | अष्टम ज्योतिर्लिंग को 'त्र्यम्बक' के नाम से भी जाना जाता है। यह नासिक ज़िले में पंचवटी से लगभग अठारह मील की दूरी पर है। यह मन्दिर ब्रह्मगिरि के पास गोदावरी नदी कें किनारे अवस्थित है। |
| वैद्यनाथ ज्योतिर्लिंग | नवम ज्योतिर्लिंग 'वैद्यनाथ' हैं। यह स्थान झारखण्ड प्रान्त के संथाल परगना में जसीडीह रेलवे स्टेशन के समीप में है। पुराणों में इस जगह को चिताभूमि कहा गया है। |
| नागेश्वर ज्योतिर्लिंग | नागेश नामक ज्योतिर्लिंग दशम है, जो गुजरात के बड़ौदा क्षेत्र में गोमती द्वारका के समीप है। इस स्थान को दारूकावन भी कहा जाता है। कुछ लोग दक्षिण हैदराबाद के औढ़ा ग्राम में स्थित शिवलिंग का नागेश्वर ज्योतिर्लिंग मानते हैं, |

| | |
|---|---|
| | तो कोई-कोई उत्तराखण्ड के अल्मोड़ा ज़िले में स्थित जागेश्वर शिवलिंग को ज्योतिर्लिंग कहते हैं। |
| रामेश्वर ज्योतिर्लिंग | एकादशवें ज्योतिर्लिंग श्री 'रामेश्वर' हैं। रामेश्वरतीर्थ को ही सेतुबन्ध तीर्थ कहा जाता है। यह स्थान तमिलनाडु के रामनाथम जनपद में स्थित है। यहाँ समुद्र के किनारे भगवान श्री रामेश्वरम का विशाल मन्दिर शोभित है। |
| घुश्मेश्वर ज्योतिर्लिंग | द्वादशवें ज्योतिर्लिंग का नाम 'घुश्मेश्वर' है। इन्हें कोई 'घृष्णेश्वर' तो कोई 'घुसृणेश्वर' के नाम से पुकारता हैं। यह स्थान महाराष्ट्र क्षेत्र के अन्तर्गत दौलताबाद से लगभग अठारह किलोमीटर दूर 'बेरूलठ गाँव के पास है। इस स्थान को 'शिवालय' भी कहा जाता है। |

उपर्युक्त द्वादश ज्योतिर्लिंगों के सम्बन्ध में शिव पुराण की कोटि 'रुद्रसंहिता' में निम्नलिखित श्लोक दिया गया है-

सौराष्ट्रे सोमनाथंच श्रीशैले मल्लिकार्जुनम्।
उज्जयिन्यां महाकालमोंकारं परमेश्वरम्।।
केदारं हिमवत्पृष्ठे डाकियां भीमशंकरम्।
वाराणस्यांच विश्वेशं त्र्यम्बकं गौतमीतटे।।
वैद्यनाथं चिताभूमौ नागेशं दारूकावने।
सेतूबन्धे च रामेशं घुश्मेशंच शिवालये।।
द्वादशैतानि नामानि प्रातरूत्थाय यः पठेत्।
सप्तजन्मकृतं पापं स्मरणेन विनश्यति।।
यं यं काममपेक्ष्यैव पठिष्यन्ति नरोत्तमाः।
तस्य तस्य फलप्राप्तिर्भविष्यति न संशयः।।

जो भी मनुष्य प्रतिदिन प्रातः काल उठकर इन ज्योतिर्लिंगों से सम्बन्धित श्लोकों का पाठ करता है, अर्थात् उपर्युक्त श्लोकों को पढ़ता हुआ, शिवलिंगों का ध्यान करता है, उसके सात जन्मों तक के पाप नष्ट हो जाते हैं। जिस कामना की पूर्ति के लिए मनुष्य नित्य इन नामों का पाठ करता है, शीघ्र ही उस फल की प्राप्ति हो जाती है। इन लिंगो के दर्शन मात्र से सभी पापों का क्षय हो जाता है, यही भगवान शंकर की विशेषता है।

भगवान शिव के ज्योतिर्लिंग में प्रकट होने के बाद ब्रह्मा जी और भगवान विष्णु ने उनकी स्तुति की, जिससे प्रसन्न होकर भगवान शंकर अपने वास्तविक स्वरूप में प्रकट हो गये। उन्होंने इन देवताओं से कहा देववरों! मैं आप लोगों पर बहुत प्रसन्न हूँ। आप दोनों ही मेरी इच्छा के अनुरूप प्रकृति से उत्पन्न हुए हैं। मैने अपने निर्गुण स्वरूप को तीन रूपों में बाँटकर अलग-अलग गुणों से युक्त कर दिया है। मेरे दाहिने भाग में लोक पितामह ब्रह्मा, बायें भाग में विष्णु तथा हृदय प्रदेश में परमात्मा अवस्थित है। यद्यपि मै निर्गुण हूँ, फिर भी गुणों के संयोग से मेरा बन्धन नहीं होता है।

इस लोक के सारे दृश्य पदार्थ मेरे ही स्वरूप है। मैं आप दोनों तथा उत्पन्न होने वाले 'रुद्र' नामक व्यक्ति सब एक ही रूप हैं। हम लोगों के अन्दर किसी भी प्रकार का भेद नहीं है, क्योंकि भेद ही बन्धन का कारक बनता है। उसके बाद प्रसन्न शिव ने विष्णु से कहा- 'हे सनातन विष्णो! आप जीवों की मुक्ति प्रदान करने का दायित्व सम्हालिए। मेरे दर्शन करने से जो भी फल प्राप्त होता है, वही फल आपके दर्शन करने से भी मिलेगा। आप मेरे हृदय में निवास करते हैं और मैं आपके हृदय में निवास करता हूँ। इस प्रकार का भाव जो भी मनुष्य अपने हृदय में रखता है और मेरे तथा आप में कोई भेद नहीं देखता है, ऐसा मनुष्य मुझे अत्यन्त प्रिय है। इस प्रकार रहस्यमय उपदेश देने के बाद भगवान शिव अन्तर्धान हो गये।

।।ॐ नमो भगवते वासुदेवाय:।।

।।ॐ नमः शिवाय ।।

# सोमनाथ

सोमनाथ  ज्योतिर्लिंग शिव जी के बारह ज्योतिर्लिंगों में से पहला ज्योतिर्लिंग माना जाता है।  यह मंदिर गर्भगृह, सभामंडप और नृत्यमंडप- तीन प्रमुख भागों में विभाजित है। इसका 150 फुट ऊँचा शिखर है। इसके शिखर पर स्थित कलश का भार दस टन है और इसकी ध्वजा 27 फुट ऊँची है। इसके अबाधित समुद्री मार्ग- त्रिष्टांभ के विषय में ऐसा माना जाता है कि यह समुद्री मार्ग परोक्ष रूप से दक्षिणी ध्रुव में समाप्त होता है। यह हमारे प्राचीन ज्ञान व सूझबूझ का अद्‌भुत साक्ष्य माना जाता है। इस मंदिर का पुनर्निर्माण महारानी अहिल्याबाई ने करवाया था।

पौराणिक वर्णन

शिव पुराण के अनुसार द्वादश ज्योतिर्लिंग में सोमनाथ की गणना प्रथम है। इनके आविर्भाव का प्रकरण प्रजापति दक्ष और चन्द्रमा के साथ जुड़ा है। जब प्रजापति दक्ष ने अपनी अश्विनी आदि सभी सत्ताइस पुत्रियों का विवाह चन्द्रमा के साथ कर दिया, तो वे बहुत प्रसन्न हुए। पत्नी के रूप में दक्ष कन्याओं को प्राप्त कर चन्द्रमा बहुत शोभित हुए और दक्षकन्याएँ भी अपने स्वामी के रूप में चन्द्रमा को प्राप्त कर शोभायमान हो उठी। चन्द्रमा की उन सत्ताइस पत्नियों में रोहिणी उन्हें अतिशय प्रिय थी, जिसको वे विशेष आदर तथा प्रेम करते थे। उनका इतना प्रेम अन्य पत्नियों से नहीं था। चन्द्रमा की उदासीनता और उपेक्षा का देखकर रोहिणी की अपेक्षा शेष स्त्रियाँ बहुत दुःखी हुई।

वे सभी स्त्रियाँ अपने पिता दक्ष की शरण में गयीं और उनसे अपने कष्टों का वर्णन किया। अपनी पुत्रियों की व्यथा और चन्द्रमा के दुर्व्यवहार को सुनकर दक्ष भी बड़े दुःखी हुए। उन्होंने चन्द्रमा से भेंट की और शान्तिपूर्वक कहा- 'कलानिधे! तुमने निर्मल व पवित्र कुल में जन्म लिया है, फिर भी तुम अपनी पत्नियों के साथ भेदभावपूर्ण व्यवहार करते हो। तुम्हारे आश्रय में रहने वाली जितनी भी स्त्रियाँ हैं, उनके प्रति तुम्हारे मन में प्रेम कम और अधिक, ऐसा सौतेला व्यवहार क्यों है? तुम किसी को अधिक प्यार करते हो और किसी को कम प्यार देते हो, ऐसा क्यों करते हो? अब तक जो व्यवहार किया है, वह ठीक नहीं है, फिर अब आगे ऐसा दुर्व्यवहार तुम्हें नहीं करना चाहिए। जो व्यक्ति आत्मीयजनों के साथ विषमतापूर्ण व्यवहार करता है, उसे नर्क में जाना पड़ता है।' इस प्रकार प्रजापति दक्ष ने अपने दामाद चन्द्रमा को प्रेमपूर्वक समझाया और ऐसा सोच लिया कि चन्द्रमा में सुधार हो जाएगा। उसके बाद प्रजापति दक्ष वापस चले गये।

शिव महापुराण के कोटिरुद्र संहिता के चौदहवें अध्याय में लिखा है-

विमले च कुले त्वं हि समुत्पन्नः कलानिधे।
आश्रितेषु च सर्वेषु न्यूनाधिक्यं कथं तव।।

कृतं चेतत्कृतं तच्च् न कर्त्तव्यं त्वया पुनः।
वर्तनं विषमत्वेन नरकप्रदमीरितम्।।

प्रबल भावी के कारण विवश चन्द्रमा ने अपने ससुर प्रजापति दक्ष की बात नहीं मानी। रोहिणी के प्रति अतिशय आसक्ति के कारण उन्होंने अपने कर्त्तव्य की अवहेलना की तथा अपनी अन्य पत्नियों का कुछ भी ख्याल नहीं रखा और उन सभी से उदासीन रहे। दुबारा समाचार प्राप्त कर प्रजापति दक्ष बड़े दुःखी हुए। वे पुनः चन्द्रमा के पास आकर उन्हें उत्तम नीति के द्वारा समझने लगे। दक्ष ने चन्द्रमा से न्यायोचित बर्ताव करने की प्रार्थना की। बार-बार आग्रह करने पर भी चन्द्रमा ने अवहेलनापूर्वक जब दक्ष की बात नहीं मानी, तब उन्होंने शाप दे दिया। दक्ष ने कहा कि मेरे आग्रह करने पर भी तुमने मेरी अवज्ञा की है, इसलिए तुम्हें क्षयरोग हो जाए:

श्रयतां चन्द्र यत्पूर्व प्रार्थितो बहुधा मया।
न मानितं त्वया यस्मात्तस्मात्त्वं च क्षयी भव।।

दक्ष द्वारा शाप देने के साथ ही क्षण भर में चन्द्रमा क्षय रोग से ग्रसित हो गये। उनके क्षीण होते ही सर्वत्र हाहाकार मच गया। सभी देवगण तथा ऋषिगण भी चिंतित हो गये। परेशान चन्द्रमा ने अपनी अस्वस्थता तथा उसके कारणों की सूचना इन्द्र आदि देवताओं तथा ऋषियों को दी। उसके बाद उनकी सहायता के लिए इन्द्र आदि देवता तथा वसिष्ठ आदि ऋषिगण ब्रह्माजी की शरण में गये। ब्रह्मा जी ने उनसे कहा कि जो घटना हो गई है, उसे तो भुगतना ही है, क्योंकि दक्ष के निश्चय को पलटा नहीं जा सकता। उसके बाद ब्रह्माजी ने उन देवताओं को एक उत्तम उपाय बताया।

ब्रह्माजी ने कहा कि चन्द्रमा देवताओं के साथ कल्याणकारक शुभ प्रभास

क्षेत्र में चले जायें। वहाँ पर विधिपूर्वक शुभ मृत्युंजय-मंत्र का अनुष्ठान करते हुए श्रद्धापूर्वक भगवान शिव की आराधना करें।

अपने सामने शिवलिंग की स्थापना करके प्रतिदिन कठिन तपस्या करें। इनकी आराधना और तपस्या से जब भगवान भोलेनाथ प्रसन्न हो जाएँगे, तो वे इन्हें क्षय रोग से मुक्त कर देगें। पितामह ब्रह्माजी की आज्ञा को स्वीकार कर देवताओं और ऋषियों के संरक्षण में चन्द्रमा देवमण्डल सहित प्रभास क्षेत्र में पहुँच गये।

वहाँ चन्द्रदेव ने मृत्युंजय भगवान की अर्चना-वन्दना और अनुष्ठान प्रारम्भ किया। वे मृत्युंजय-मंत्र का जप तथा भगवान शिव की उपासना में तल्लीन हो गये। ब्रह्मा की ही आज्ञा के अनुसार चन्द्रमा ने छः महीने तक निरन्तर तपस्या की और वृषभ ध्वज का पूजन किया। दस करोड़ मृत्यंजय-मंत्र का जप तथा ध्यान करते हुए चन्द्रमा स्थिरचित्त से वहाँ निरन्तर खड़े रहे।

उनकी उत्कट तपस्या से भक्तवत्सल भगवान शंकर प्रसन्न हो गये। उन्होंने चन्द्रमा से कहा- 'चन्द्रदेव! तुम्हारा कल्याण हो। तुम जिसके लिए यह कठोर तप कर रहे हो, उस अपनी अभिलाषा को बताओ। मै तुम्हारी इच्छा के अनुसार तुम्हें उत्तम वर प्रदान करूँगा।' चन्द्रमा ने प्रार्थना करते हुए विनयपूर्वक कहा- 'देवेश्वर! आप मेरे सब अपराधों को क्षमा करें और मेरे शरीर के इस क्षयरोग को दूर कर दें।'

भगवान शिव ने कहा– 'चन्द्रदेव! तुम्हारी कल प्रतिदिन एक पक्ष में क्षीण हुआ करेगी, जबकि दूसरे पक्ष में प्रतिदिन वह निरन्तर बढ़ती रहेगी। इस प्रकार तुम स्वस्थ और लोक-सम्मान के योग्य ही जाओगे। भगवान शिव का कृपा-प्रसाद प्राप्त कर चन्द्रदेव बहुत प्रसन्न हुए। उन्होंने भक्तिभावपूर्वक शंकर की स्तुति की। ऐसी स्थिति में निराकार शिव उनकी दृढ़ भक्ति को देखकर साकार लिंग रूप में प्रकट हो गये तथा प्रभास क्षेत्र के महत्त्व को बढाने हेतु देवताओं के सम्मान तथा चन्द्रमा के यश का

विस्तार करने के लिए स्वयं 'सोमेश्वर' कहलाने लगे। चन्द्रमा के नाम पर सोमनाथ बने भगवान शिव संसार में 'सोमनाथ' के नाम से प्रसिद्ध हुए।

सोमनाथ में पूजा उपासना का लाभ

सोमनाथ भगवान की पूजा और उपासना करने से उपासक भक्त के क्षय तथा कोढ़ आदि रोग सर्वथा नष्ट हो जाते हैं और वह स्वस्थ हो जाता है। यशस्वी चन्द्रमा के कारण ही सोमेश्वर भगवान शिव इस भूतल को परम पवित्र करते हुए प्रभास क्षेत्र में विराजते हैं। उस प्रभास क्षेत्र में सभी देवताओं ने मिलकर एक सोमकुण्ड की भी स्थापना की है। ऐसा विश्वास किया जाता है कि इस कुण्ड में शिव तथा ब्रह्मा का सदा निवास रहते हैं। इस पृथ्वी पर यह चन्द्रकुण्ड मनुष्यों के पाप नाश करने वाले के रूप में प्रसिद्ध है। इसे 'पापनाशक-तीर्थ' भी कहते हैं। जो मनुष्य इस चन्द्रकुण्ड में स्नान करता है, वह सब प्रकार के पापों से मुक्त हो जाता है। इस कुण्ड में बिना नागा किये छः माह तक स्नान करने से क्षय आदि दुःसाध्य और असाध्य रोग भी नष्ट हो जाते हैं। मुनष्य जिस किसी भी भावना या इच्छा से इस परम पवित्र और उत्तम तीर्थ का सेवन करता है, तो वह बिना संशय ही उसे प्राप्त कर लेता है। शिव महापुराण की कोटिरुद्र संहिता के चौदहवें अध्याय में उपर्युक्त आशय वर्णित है-

चन्द्रकुण्डं प्रसिद्ध च पृथिव्यां पापनाशनम्।
तत्र स्नाति नरो यः स सर्वैः पापैः प्रमुच्यते।।

रोगाः सर्वे क्षयाद्याश्च ह्वासाध्या ये भवन्ति वै।
ते सर्वे च क्षयं यान्ति षण्मासं स्नानमात्रतः।।

प्रभासं च परिक्रम्य पृथिवीक्रमसं भवम्।
फलं प्राप्नोति शुद्धात्मा मृतः स्वर्गे महीयते।।

सोमलिंग नरो दृष्टा सर्वपापात्प्रमुच्यते ।

लब्धवा फलं मनोभीष्टं मृतः स्वर्गं समीहते।।

इस प्रकार सोमनाथ के नाम से प्रसिद्ध भगवान शिव देवताओं की प्रार्थना पर लोक कल्याण करने हेतु प्रभास क्षेत्र में हमेशा-हमेशा के लिए विराजमान हो गये। इस प्रकार शिव-महापुराण में सोमेश्वर महादेव अथवा सोमनाथ ज्योतिर्लिंग की उत्पत्ति का वर्णन है। इसके अतिरिक्त अन्य ग्रन्थों में लिखी कथा भी इसी से मिलती-जुलती है।

## इतिहास

सागर तट से मंदिर का दृश्य सर्वप्रथम एक मंदिर ईसा के पूर्व में अस्तित्व में था जिस जगह पर द्वितीय बार मंदिर का पुनर्निर्माण सातवीं सदी में वल्लभी के मैत्रक राजाओं ने किया । आठवीं सदी में सिन्ध के अरबी गवर्नर जुनायद ने इसे नष्ट करने के लिए अपनी सेना भेजी । प्रतिहार राजा नागभट्ट ने 815 ईस्वी में इसका तीसरी बार पुनर्निर्माण किया ।

इस मंदिर की महिमा और कीर्ति दूर-दूर तक फैली थी । अरब यात्री अल-बरुनी ने अपने यात्रा वृतान्त में इसका विवरण लिखा जिससे प्रभावित हो महमूद ग़ज़नवी ने सन 1024 में कुछ 5000 साथियों के साथ सोमनाथ मंदिर पर हमला किया, उसकी सम्पत्ति लूटी और उसे नष्ट कर दिया । 50000 लोग मंदिर के अंदर हाथ जोडकर पूजा अर्चना कर रहे थे ,प्रायः सभी कत्ल कर दिये गये।

इसके बाद गुजरात के राजा भीम और मालवा के राजा भोज ने इसका पुनर्निर्माण कराया । सन् 1093 में सिद्धराज जयसिंह ने भी मन्दिर की प्रतिष्ठा और उसके पवित्रीकरण में भरपूर सहयोग किया। 1168 में विजयेश्वर कुमारपाल ने जैनाचार्य हेमचन्द्र सरि के साथ सोमनाथ की यात्रा की थी। उन्होंने भी मन्दिर का बहुत कुछ सुधार करवाया था।

मंदिर का बार-बार खंडन और जीर्णोद्धार होता रहा पर शिवलिंग यथावत रहा। लेकिन सन 1026 में महमूद गजनी ने जो शिवलिंग खंडित किया, वह यही आदि शिवलिंग था। इसके बाद प्रतिष्ठित किए गए शिवलिंग को 1297 में अलाउद्दीन की सेना ने खंडित किया। बताया जाता है आगरा के किले में रखे देवद्वार सोमनाथ मंदिर के हैं। महमूद गजनी सन 1026 में लूटपाट के दौरान इन द्वारों को अपने साथ ले गया था।

सन् 1395 ई. में गुजरात का सुल्तान मुजफ्फरशाह भी मन्दिर का विध्वंस करने में जुट गया। अपने पितामह के पदचिह्नों पर चलते हुए अहमदशाह ने पुनः सन् 1413 ई. में सोमनाथ-मन्दिर को तोड़ डाला।

कट्टर मुस्लिम बादशाह औरंगजेब के काल में सोमनाथ मंदिर को दो बार तोडा गया प्रथम 1665 में और द्वितीय 1706 में। ऐसी मान्यता है की सोमनाथ मंदिर का ध्वंस ही मुग़ल सल्तनत की समाप्ति का कारण बना।

राजा कुमार पाल द्वारा इसी स्थान पर अन्तिम मंदिर बनवाया गया था। सौराष्ट्र के मुख्यमन्त्री उच्छंगराय नवल शंकर ढेबर ने 19 अप्रैल 1940 को यहां उत्खनन कराया था। इसके बाद भारत सरकार के पुरातत्व विभाग ने उत्खनन द्वारा प्राप्त ब्रह्मशिला पर शिव का ज्योतिर्लिंग स्थापित किया है।

सौराष्ट्र के पूर्व राजा दिग्विजय सिंह ने 8 मई 1940 को मंदिर की आधार शिला रखी तथा 11 मई 1951 को भारत के प्रथम राष्ट्रपति डॉ. राजेंद्र प्रसाद ने मंदिर में ज्योतिर्लिंग स्थापित किया। नवीन सोमनाथ मंदिर 1962 में पूर्ण निर्मित हो गया। 1970 में जामनगर की राजमाता ने अपने स्वर्गीय पति की स्मृति में उनके नाम से दिग्विजय द्वार बनवाया। इस द्वार के पास राजमार्ग है और पूर्व गृहमन्त्री सरदार बल्लभ भाई पटेल की प्रतिमा है। सोमनाथ मंदिर निर्माण में पटेल का बडा योगदान रहा।

1948 में प्रभासतीर्थ प्रभास पाटण के नाम से जाना जाता था। इसी नाम से इसकी तहसील और नगर पालिका थी। यह जूनागढ रियासत का मुख्य

नगर था। लेकिन 1948 के बाद इसकी तहसील, नगर पालिका और तहसील कचहरी का वेरावल में विलय हो गया।

मंदिर के दक्षिण में समुद्र के किनारे एक स्तंभ है। उसके ऊपर एक तीर रखकर संकेत किया गया है कि सोमनाथ मंदिर और दक्षिण ध्रुव के बीच में पृथ्वी का कोई भूभाग नहीं है। मंदिर के पृष्ठ भाग में स्थित प्राचीन मंदिर के विषय में मान्यता है कि यह पार्वती जी का मंदिर है। सोमनाथजी के मंदिर की व्यवस्था और संचालन का कार्य सोमनाथ ट्रस्ट के अधीन है। सरकार ने ट्रस्ट को जमीन, बाग-बगीचे देकर आय का प्रबंध किया है।

## स्वतन्त्रता-प्राप्ति के बाद

भारतीय स्वतन्त्रता-प्राप्ति के बाद राष्ट्र के प्रथम राष्ट्रपति डा. राजेन्द्र प्रसाद ने देश के स्वाभिमान को जाग्रत करते हुए पुनः सोमनाथ मन्दिर का भव्य निर्माण कराया। आज पुनः भारतीय-संस्कृति और सनातन-धर्म की ध्वजा के रूप में सोमेश्वर ज्योतिर्लिंग 'सोमनाथ मन्दिर' के रूप में शोभायमान है। सोमनाथ का मूल मन्दिर जो बार-बार नष्ट किया गया था, वह आज भी अपने मूलस्थान समुद्र के किनारे ही है। स्वाधीन भारत के प्रथम गृहमन्त्री सरदार वल्लभभाई पटेल ने यहाँ भव्यमन्दिर का निर्माण कराया था। सोमनाथ के मूल मन्दिर से कुछ ही दूरी पर अहल्याबाई द्वारा बनवाया गया सोमनाथ का मन्दिर है।

## तीर्थ स्थान और मंदिर

यह तीर्थ पितृगणों के श्राद्ध, नारायण बलि आदि कर्मो के लिए भी प्रसिद्ध है। चैत्र, भाद्र, कार्तिक माह में यहां श्राद्ध करने का विशेष महत्व बताया गया है। इन तीन महीनों में यहां श्रद्धालुओं की बडी भीड लगती है। इसके अलावा यहां तीन नदियों हिरण, कपिला और सरस्वती का महासंगम होता है। इस त्रिवेणी स्नान का विशेष महत्व है।

मंदिर नं.1 के प्रांगण में हनुमानजी का मंदिर, पर्दी विनायक, नवदुर्गा खोडीयार, महारानी अहिल्याबाई होल्कर द्वारा स्थापित सोमनाथ ज्योतिर्लिंग, अहिल्येश्वर, अन्नपूर्णा, गणपति और काशी विश्वनाथ के मंदिर हैं।

अघोरेश्वर मंदिर नं. 6 के समीप भैरवेश्वर मंदिर, महाकाली मंदिर, दुखहरण जी की जल समाधि स्थित है। पंचमुखी महादेव मंदिर कुमार वाडा में, विलेश्वर मंदिर नं. 12 के नजदीक और नं. 15 के समीप राममंदिर स्थित है। नागरों के इष्टदेव हाटकेश्वर मंदिर, देवी हिंगलाज का मंदिर, कालिका मंदिर, बालाजी मंदिर, नरसिंह मंदिर, नागनाथ मंदिर समेत कुल 42 मंदिर नगर के लगभग दस किलो मीटर क्षेत्र में स्थापित हैं।

<u>बाहरी क्षेत्र के प्रमुख मंदिर</u>

वेरावल प्रभास क्षेत्र के मध्य में समुद्र के किनारे शशिभूषण मंदिर, भीडभंजन गणपति, बाणेश्वर, चंद्रेश्वर-रत्नेश्वर, कपिलेश्वर, रोटलेश्वर, भालुका तीर्थ है। भालकेश्वर, प्रागटेश्वर, पद्म कुंड, पांडव कूप, द्वारिकानाथ मंदिर, बालाजी मंदिर, लक्ष्मीनारायण मंदिर, रूद्रेश्वर मंदिर, सूर्य मंदिर, हिंगलाज गुफा, गीता मंदिर, बल्लभाचार्य महाप्रभु की ६५वीं बैठक के अलावा कई अन्य प्रमुख मंदिर है।

प्रभास खंड में विवरण है कि सोमनाथ मंदिर के समयकाल में अन्य देव मंदिर भी थे। इनमें शिवजी के 135, विष्णु भगवान के 5, देवी के 25, सूर्यदेव के 16, गणेशजी के 5, नाग मंदिर 1, क्षेत्रपाल मंदिर 1, कुंड 19 और नदियां 9 बताई जाती हैं।

एक शिलालेख में विवरण है कि महमूद के हमले के बाद इक्कीस मंदिरों का निर्माण किया गया। संभवत: इसके पश्चात भी अनेक मंदिर बने होंगे। प्रमुख तीर्थ द्वारिका सोमनाथ से करीब दो सौ किलोमीटर दूरी पर प्रमुख

तीर्थ श्रीकृष्ण की द्वारिका है। यहां भी प्रतिदिन द्वारिकाधीश के दर्शन के लिए देश-विदेश से हजारों की संख्या में श्रद्धालु आते है। यहां गोमती नदी है। इसके स्नान का विशेष महत्व बताया गया है। इस नदी का जल सूर्योदय पर बढता जाता है और सूर्यास्त पर घटता जाता है, जो सुबह सूरज निकलने से पहले मात्र एक डेढ फीट ही रह जाता है।

पहुँचने के साधन

सोमनाथ का मन्दिर जिस स्थान पर स्थित है, उसे वेरावल, सोमनाथपाटण, प्रभास और प्रभासपाटण आदि नामों से जाना जाता है। सौराष्ट्र के पश्चिमी रेलवे स्टेशन की राजकोट-वेरीवल तथा खिजडिया वेरावल लाइनें हैं। इन दोनों ओर से वेरावल पहुँचा जाता है। वेरावल रेलवे स्टेशन से प्रभासपाटण पाँच किलोमीटर की दूरी पर है। स्टेशन से बस, टैक्सी आदि के द्वारा प्रभासपाटण पहुँचा जा सकता है। विशेषता यहाँ भू-गर्भ में (भूमि के नीचे) सोमनाथ लिंग की स्थापना की गई है। भू-गर्भ में होने के कारण यहाँ प्रकाश का अभाव रहता है। इस मन्दिर में पार्वती, सरस्वती देवी, लक्ष्मी, गंगा और नन्दी की भी मूर्तियाँ स्थापित हैं। भूमि के ऊपरी भाग में शिवलिंग से ऊपर अहल्येश्वर मूर्ति है। मन्दिर के परिसर में गणेशजी का मन्दिर है और उत्तर द्वार के बाहर अघोरलिंग की मूर्ति स्थापित की गई है। प्रभावनगर में अहल्याबाई मन्दिर के पास ही महाकाली का मन्दिर है। इसी प्रकार गणेशजी, भद्रकाली तथा भगवान विष्णु का मन्दिर नगर में विद्यमान है।

नगर के द्वार के पास गौरीकुण्ड नामक सरोवर है। सरोवर के पास ही एक प्राचीन शिवलिंग है। 'समुद्रका' अग्निकुण्ड सोमनाथ में धर्मयात्रियों के लिए अनेक पवित्र और दर्शनीय स्थान विद्यमान हैं। प्रभासपाटण नगर के बाहर ही एक 'समुद्रका' नामक अग्निकुण्ड है। सर्वप्रथम यात्रीगण इसी कुण्ड में स्नान करते हैं, उसके बाद वे प्राची त्रिवेणी में स्नान करने के लिए जाते हैं।

## प्राची त्रिवेणी

नगर के द्वार से लगभग दो किलोमीटर की दूरी पर प्राची त्रिवेणी है। उससे पहले ही रास्ते में ब्रह्माकुण्ड नामक बावडी मिलती है। वहीं पर ब्रह्माकण्डलु नामक तीर्थ और ब्रह्मेश्वर शिवमन्दिर भी स्थित है। इससे आगे चलने पर 'आदिप्रभास' तथा 'जलप्रभास' नामक दो कुण्डों का दर्शन होता है।

हिरण्या, सरस्वती और कपिला नाम वाली तीन नदियाँ नगर से पूरब की दिशा में समुद्र में जाकर मिलती है। नगर से पूरब में इन तीनों नदियों का संगम होने के कारण ही इसे 'प्राची त्रिवेणी' कहा जाता है। सबसे पहले 'कपिला' सरस्वती में मिलती है, उसके बाद 'सरस्वती' हिरण्या में मिलती है, फिर 'हिरण्या' समुद्र में जा मिलती है। प्राचीन त्रिवेणी संगम से कुछ ही दूर पर सूर्य भगवान का मन्दिर है। उससे आगे चलने पर हिंगलाज भवानी और महादेव सिद्धनाथ का मन्दिर एक गुफा के भीतर प्राप्त होता है।

ऐसी मान्यता है कि यहाँ से बलदेव जी शेषरूप धारण करके पाताल में गये थे। वहीं समीप में ही श्री वल्लभाचार्य जी की बैठक है, जहाँ त्रिवेणी माता, महाकालेश्वर, श्रीराम, श्रीकृष्ण और भीमेश्वर के मन्दिर हैं। इस स्थान को 'देहोत्सर्ग-तीर्थ' भी कहते हैं। भगवान श्रीकृष्ण को जब भालक-तीर्थ में बाण लगा था, उसके बाद वे यहाँ पर आ गये थे और फिर अन्तर्धान हो गये थे। कल्पभेद की कथा के अनुसार श्रीकृष्णचन्द्र के शरीर का यहीं अग्नि-संस्कार किया गया था।

देहोत्सर्ग तीर्थ से कुछ आगे चलकर हिरण्या नदी के किनारे यादवस्थली मिलती है। ऐसी मान्यता है कि इस यादवस्थली पर ही आपस में लड़ते हुए यादवगण नष्ट हो गये थे।

बाणतीर्थ  वेरोवल रेलवे स्टेशन से सोमनाथ आते समय रास्ते में समुद्र के किनारे बाणतीर्थ अवस्थित है। इस तीर्थ में शशिभूषण महादेव का प्राचीन मन्दिर है। समुद्र के किनारे बाणतीर्थ से पश्चिम की ओर चन्द्रभाग तीर्थ है। इस तीर्थ में बालू के ऊपर ही कलिलेश्वर महादेव का स्थान है। बाणतीर्थ से लगभग पाँच किलोमीटर पर भालुपुर गाँव के पास भालक-तीर्थ है। यहाँ पर पास में ही भालकुण्ड और पद्मकुण्ड नामक सरोवर हैं। यहीं पर एक पीपल-वृक्ष के नीचे भालेश्वर शिव का स्थान है। इस पेड़ को मोक्ष-पीपल भी कहा जाता है। ऐसी प्रसिद्धि है कि इसी वृक्ष के (पीपल) नीचे बैठे श्रीकृष्णचन्द्र को उनके चरण में 'जरा' नामक व्याध ने बाण मारा था। कहा जाता है कि उनके चरणों से बाण निकाल कर इसी भालकुण्ड में फेंक दिया था।

भालकुण्ड के पास दुर्गकूट में गणेश जी का भी मन्दिर है। यहाँ एक कर्दमकुण्ड भी है, जहाँ पर कर्देश्वर-महादेव का मन्दिर है। कुछ लोग बाण तीर्थ को ही भालक तीर्थ भी कहते हैं। पुराण की एक विशेष कथा के अनुसार भगवान ब्रह्मा ने पृथ्वी को खोदकर प्रभास क्षेत्र में मुर्गी के अण्डे बराबर स्वयम्भू शिवलिंग सोमनाथ के दर्शन किये उसके बाद उन्होंने उस लिंग को कुशा तथा मधु से ढँककर उस पर ब्रह्मशिला रख दी। उसी ब्रह्मशिला के उपर ब्रह्मा ने सोमनाथ के बृहद्लिंग की प्रतिष्ठा की। चन्द्रमा इसी बृहद्लिंग की अर्चना-वन्दना करने के बाद प्रजापति दक्ष के शाप से मुक्त हुऐ थे।

# मल्लिकार्जुन

मल्लिकार्जुन ज्योतिर्लिंग आंध्र प्रदेश के पश्चिमी भाग में कुर्नूल जिले के नल्लामल्ला जंगलों के मध्य श्रीशैलम पहाडी पर स्थित है। श्रीशैलम पहाडी पर स्थित होने के कारण मल्लिकार्जुन ज्योतिर्लिंग को श्री शैलम भी कहा जाता है। यहाँ शिव की आराधना मल्लिकार्जुन नाम से की जाती है। मंदिर का गर्भगृह बहुत छोटा है और एक समय में अधिक लोग नही जा सकते। इस कारण यहाँ दर्शन के लिए लंबी प्रतीक्षा करनी होती है।

स्कंद पुराण में श्री शैल काण्ड नाम का अध्याय है। इसमें उपरोक्त मंदिर का वर्णन है। इससे इस मंदिर की प्राचीनता का पता चलता है। तमिल संतों ने भी प्राचीन काल से ही इसकी स्तुति गायी है। कहा जाता है कि

आदि शंकराचार्य ने जब इस मंदिर की यात्रा की, तब उन्होंने शिवनंद लहरी की रचना की थी। श्री शैलम का सन्दर्भ प्राचीन हिन्दू पुराणों और ग्रंथ महाभारत में भी आता है।

इसे दक्षिण का कैलाश कहते हैं। अनेक धर्मग्रन्थों में इस स्थान की महिमा बतायी गई है। महाभारत के अनुसार श्रीशैल पर्वत पर भगवान शिव का पूजन करने से अश्वमेध यज्ञ करने का फल प्राप्त होता है। कुछ ग्रन्थों में तो यहाँ तक लिखा है कि श्रीशैल के शिखर के दर्शन मात्र करने से दर्शको के सभी प्रकार के कष्ट दूर भाग जाते हैं, उसे अनन्त सुखों की प्राप्ति होती है और आवागमन के चक्कर से मुक्त हो जाता है।

<u>शिव महापुराण में वर्णित कथा</u>

शिव महापुराण के कोटिरुद्र संहिता के पन्द्रहवे अध्याय में उपलब्ध होता है–

तदिद्रं हि समारभ्य मल्लिकार्जुन सम्भवम्।
लिंगं चैव शिवस्यैकं प्रसिद्धं भुवनत्रये।।

तल्लिंग यः समीक्षते स सवैः किल्बिषैरपि।
मुच्यते नात्र सन्देहः सर्वान्कामानवाप्नुयात्।।

दुःखं च दूरतो याति सुखमात्यंतिकं लभेत।
जननीगर्भसम्भूत कष्टं नाप्नोति वै पुनः।।

धनधान्यसमृद्धिश्च प्रतिष्ठाऽऽरोग्यमेव च।
अभीष्टफलसिद्धिश्च जायते नात्र संशयः।।

शिव पार्वती के पुत्र स्वामी कार्तिकेय और गणेश दोनों भाई विवाह के लिए आपस में कलह करने लगे। कार्तिकेय का कहना था कि वे बड़े हैं,

इसलिए उनका विवाह पहले होना चाहिए, किन्तु श्री गणेश अपना विवाह पहले करना चाहते थे। इस झगड़े पर फैसला देने के लिए दोनों अपने माता-पिता भवानी और शंकर के पास पहुँचे। उनके माता-पिता ने कहा कि तुम दोनों में जो कोई इस पृथ्वी की परिक्रमा करके पहले यहाँ आ जाएगा, उसी का विवाह पहले होगा। शर्त सुनते ही कार्तिकेय जी पृथ्वी की परिक्रमा करने के लिए दौड़ पड़े। इधर स्थूलकाय श्री गणेश जी और उनका वाहन भी चूहा, भला इतनी शीघ्रता से वे परिक्रमा कैसे कर सकते थे। गणेश जी के सामने भारी समस्या उपस्थित थी। श्रीगणेश जी शरीर से ज़रूर स्थूल हैं, किन्तु वे बुद्धि के सागर हैं। उन्होंने कुछ सोच-विचार किया और अपनी माता पार्वती तथा पिता देवाधिदेव महेश्वर से एक आसन पर बैठने का आग्रह किया। उन दोनों के आसन पर बैठ जाने के बाद श्रीगणेश ने उनकी सात परिक्रमा की, फिर विधिवत् पूजन किया-

पित्रोश्च पूजनं कृत्वा प्रकान्तिं च करोति यः।
तस्य वै पृथिवीजन्यं फलं भवति निश्चितम्।।

इस प्रकार श्रीगणेश माता-पिता की परिक्रमा करके पृथ्वी की परिक्रमा से प्राप्त होने वाले फल की प्राप्ति के अधिकारी बन गये। उनकी चतुर बुद्धि को देख कर शिव और पार्वती दोनों बहुत प्रसन्न हुए और उन्होंने श्रीगणेश का विवाह भी करा दिया। जिस समय स्वामी कार्तिकेय सम्पूर्ण पृथ्वी की परिक्रमा करके वापस आये, उस समय श्रीगणेश जी का विवाह विश्वरूप प्रजापति की पुत्रियों सिद्धि और बुद्धि के साथ हो चुका था। इतना ही नहीं श्री गणेशजी को उनकी 'सिद्धि' नामक पत्नी से 'क्षेम' तथा बुद्धि नामक पत्नी से 'लाभ', ये दो पुत्ररत्न भी मिल गये थे। भ्रमणशील और जगत का कल्याण करने वाले देवर्षि नारद ने स्वामी कार्तिकेय से यह सारा वृतान्त कहा सुनाया। श्रीगणेश का विवाह और उन्हें पुत्र लाभ का समाचार सुनकर स्वामी कार्तिकेय जल उठे।

इस प्रकरण से नाराज़ कार्तिक ने शिष्टाचार का पालन करते हुए अपने माता-पिता के चरण छुए और वहाँ से चल दिये। माता-पिता से अलग

होकर कार्तिक स्वामी क्रौंच पर्वत पर रहने लगे। शिव और पार्वती ने अपने पुत्र कार्तिकेय को समझा-बुझाकर बुलाने हेतु देवर्षि नारद को क्रौंचपर्वत पर भेजा। देवर्षि नारद ने बहुत प्रकार से स्वामी को मनाने का प्रयास किया, किन्तु वे वापस नहीं आये। उसके बाद कोमल हृदय माता पार्वती पुत्र स्नेह में व्याकुल हो उठीं। वे भगवान शिव जी को लेकर क्रौंच पर्वत पर पहुँच गईं। इधर स्वामी कार्तिकेय को क्रौंच पर्वत अपने माता-पिता के आगमन की सूचना मिल गई और वे वहाँ से तीन योजन अर्थात छत्तीस किलोमीटर दूर चले गये। कार्तिकेय के चले जाने पर भगवान शिव उस क्रौंच पर्वत पर ज्योतिर्लिंग के रूप में प्रकट हो गये तभी से वे 'मल्लिकार्जुन' ज्योतिर्लिंग के नाम से प्रसिद्ध हुए। 'मल्लिका' माता पार्वती का नाम है, जबकि 'अर्जुन' भगवान शंकर को कहा जाता है। इस प्रकार सम्मिलित रूप से 'मल्लिकार्जुन' नाम उक्त ज्योतिर्लिंग का जगत में प्रसिद्ध हुआ।

<u>अन्य कथा</u>

एक अन्य कथा के अनुसार कौंच पर्वत के समीप में ही चन्द्रगुप्त नामक किसी राजा की राजधानी थी। उनकी राजकन्या किसी संकट में उलझ गई थी। उस विपत्ति से बचने के लिए वह अपने पिता के राजमहल से भागकर पर्वतराज की शरण में पहुँच गई। वह कन्या ग्वालों के साथ कन्दमूल खाती और दूध पीती थी। इस प्रकार उसका जीवन-निर्वाह उस पर्वत पर होने लगा। उस कन्या के पास एक श्यामा (काली) गौ थी, जिसकी सेवा वह स्वयं करती थी। उस गौ के साथ विचित्र घटना घटित होने लगी। कोई व्यक्ति छिपकर प्रतिदिन उस श्यामा का दूध निकाल लेता था। एक दिन उस कन्या ने किसी चोर को श्यामा का दूध दुहते हुए देख लिया, तब वह क्रोध में आगबबूला हो उसको मारने के लिए दौड़ पड़ी। जब वह गौ के समीप पहुँची, तो उसके आश्चर्य का ठिकाना न रहा, क्योंकि वहाँ उसे एक शिवलिंग के अतिरिक्त कुछ भी दिखाई नहीं दिया। आगे चलकर उस राजकुमारी ने उस शिवलिंग के ऊपर एक सुन्दर सा मन्दिर बनवा दिया। वही प्राचीन शिवलिंग आज 'मल्लिकार्जुन' ज्योतिर्लिंग के नाम से प्रसिद्ध

है। इस मन्दिर का भलीभाँति सर्वेक्षण करने के बाद पुरातत्त्ववेत्ताओं ने ऐसा अनुमान किया है कि इसका निर्माणकार्य लगभग दो हज़ार वर्ष प्राचीन है। इस ऐतिहासिक मन्दिर के दर्शनार्थ बड़े-बड़े राजा-महाराजा समय-समय पर आते रहे हैं।

आज से लगभग पाँच सौ वर्ष पूर्व श्री विजयनगर के महाराजा कृष्णराय यहाँ पहुँचे थे। उन्होंने यहाँ एक सुन्दर मण्डप का भी निर्माण कराया था, जिसका शिखर सोने का बना हुआ था।

उनके डेढ़ सौ वर्षों बाद महाराज शिवाजी भी मल्लिकार्जुन ज्योतिर्लिंग के दर्शन हेतु क्रौंच पर्वत पर पहुँचे थे। उन्होंने मन्दिर से थोड़ी ही दूरी पर यात्रियों के लिए एक उत्तम धर्मशाला बनवायी थी।

इस पर्वत पर बहुत से शिवलिंग मिलते हैं। यहाँ पर महाशिवरात्रि के दिन मेला लगता है। मन्दिर के पास जगदम्बा का भी एक स्थान है। यहाँ माँ पार्वती को 'भ्रमराम्बा' कहा जाता है।

मल्लिकार्जुन ज्योतिर्लिंग की पहाड़ी से पाँच किलोमीटर नीचे पातालगंगा के नाम से प्रसिद्ध कृष्णा नदी हैं, जिसमें स्नान करने का महत्त्व शास्त्रों में वर्णित है।

# महाकालेश्वर

भारत के हृदयस्थल मध्यप्रदेश के उज्जैन में पुण्य सलिला शिप्रा के तट के निकट भगवान शिव 'महाकालेश्वर ज्योतिर्लिंग' के रूप में विराजमान हैं। महाराजा विक्रमादित्य के न्याय की नगरी उज्जयिनी में भगवान महाकाल की असीम कृपा है। देशभर के बारह ज्योतिर्लिंगों में 'महाकालेश्वर ज्योतिर्लिंग' का अपना एक अलग महत्व है। कहा जाता है कि जो महाकाल का भक्त है उसका काल भी कुछ नहीं बिगाड़ सकता।

महाकाल के बारे में तो यह भी कहा जाता है कि यह पृथ्वी का एक मात्र मान्य शिवलिंग है। महाकाल की महिमा का वर्णन इस प्रकार से भी किया गया है:

आकाशे तारकं लिंगं पाताले हाटकेश्वरम् ।
भूलोके च महाकालो लिंड्गत्रय नमोस्तु ते ॥

इसका तात्पर्य यह है कि आकाश में तारक लिंग, पाताल में हाटकेश्वर लिंग तथा पृथ्वी पर महाकालेश्वर ही मान्य शिवलिंग है। महाकालेश्वर मंदिर भारत के बारह ज्योतिर्लिंगों में से एक है। यह मध्यप्रदेश राज्य के उज्जैन नगर में स्थित, महाकालेश्वर भगवान का प्रमुख मंदिर है। पुराणों, महाभारत और कालिदास जैसे महाकवियों की रचनाओं में इस मंदिर का मनोहर वर्णन मिलता है।

महाकालेश्वर मंदिर एक विशाल परिसर में स्थित है, जहाँ कई देवी-देवताओं के छोटे-बड़े मंदिर हैं। मंदिर में प्रवेश करने के लिए मुख्य द्वार से गर्भगृह तक की दूरी तय करनी पड़ती है। इस मार्ग में कई सारे पक्के चढ़ाव उतरने पड़ते हैं परंतु चौड़ा मार्ग होने से यात्रियों को दर्शनार्थियों को अधिक परेशानियाँ नहीं आती है। गर्भगृह में प्रवेश करने के लिए पक्की सीढ़ियाँ बनी हैं। उज्जैन में स्थित महाकाल ज्योतिर्लिंग का भव्य मन्दिर पाँच मंज़िल वाला है तथा क्षिप्रा नदी से कुछ दूरी पर अवस्थित है। मन्दिर के ऊपरी भाग में श्री ओंकारेश्वर विद्यमान हैं।

स्वयंभू, भव्य और दक्षिणमुखी होने के कारण महाकालेश्वर महादेव की अत्यन्त पुण्यदायी महत्ता है। इसके दर्शन मात्र से ही मोक्ष की प्राप्ति हो जाती है, ऐसी मान्यता है। महाकवि कालिदास ने मेघदूत में उज्जयिनी की चर्चा करते हुए इस मंदिर की प्रशंसा की है। 1235 ई. में इल्तुत्मिश के द्वारा इस प्राचीन मंदिर का विध्वंस किए जाने के बाद से यहां जो भी शासक रहे, उन्होंने इस मंदिर के जीर्णोद्धार और सौन्दर्यीकरण की ओर विशेष ध्यान दिया, इसीलिए मंदिर अपने वर्तमान स्वरूप को प्राप्त कर सका है। प्रतिवर्ष और सिंहस्थ के पूर्व इस मंदिर को सुसज्जित किया जाता है। उज्जैन का पुराणों और प्राचीन अन्य ग्रन्थों में 'उज्जयिनी' तथा

'अवन्तिकापुरी' के नाम से उल्लेख किया गया है। यह स्थान मालवा क्षेत्र में स्थित क्षिप्रा नदी के किनारे विद्यमान है।

अवन्तीपुरी की गणना सात मोक्षदायिनी पुरियों में की गई है-

अयोध्या मथुरा माया काशी कांची ह्यवन्तिका।
पुरी द्वारावती चैव सप्तैता मोक्षदायिकाः।।

महाराजा विक्रमादित्य द्वारा निर्माण इसी महाकालेश्वर की नगरी में महाराजा विक्रमादित्य ने चौबीस खम्बों का दरबार-मण्डप बनवाया था। मंगल ग्रह का जन्मस्थान मंगलश्वेर भी यहीं स्थित है।

इतिहास प्रसिद्ध भर्तृहरि की गुफा तथा महर्षि सान्दीपनि का आश्रम यहीं विराजमान है। श्री कृष्णचन्द्र और बलराम जी ने इसी सान्दीपनि आश्रम में विद्या का अध्ययन किया था। इसी उज्जयिनी नगरी में परम प्रतापी महाराज वीर विक्रमादित्य की राजधानी थी। जब सिंह राशि पर बृहस्पति ग्रह का आगमन होता है, तो यहाँ प्रत्येक बारह वर्ष पर महाकुम्भ का स्नान और मेला लगता है।

<u>शिव महापुराण में वर्णित कथा</u>

शिव महापुराण में वर्णित कथा समस्त देहधारियों को मोक्ष प्रदान करने वाली एक प्रसिद्ध और अत्यन्त अवन्ति नाम की नगरी है। लोक पावनी परम पुण्यदायिनी और कल्याण-कारिणी वह नगरी भगवान शिव जी को अत्यन्त प्रिय है। उसी पवित्र पुरी में शुभ कर्मपरायण तथा सदा वेदों के स्वाध्याय में लगे रहने वाले एक उत्तम ब्राह्मण रहा करते थे। वे अपने घर में अग्नि की स्थापना कर प्रतिदिन अग्निहोत्र करते थे और वैदिक कर्मों के अनुष्ठान में लगे रहते थे।

भगवान शंकर के भक्त वे ब्राह्मण शिव जी की अर्चना-वन्दना में तत्पर रहा

करते थे। वे प्रतिदिन पार्थिव लिंग का निर्माण कर शास्त्र विधि से उसकी पूजा करते थे। हमेशा उत्तम ज्ञान को प्राप्त करने में तत्पर उस ब्राह्मण देवता का नाम 'वेदप्रिय' था। वेदप्रिय स्वयं ही शिव जी के अनन्य भक्त थे, जिसके संस्कार के फलस्वरूप उनके शिव पूजा-परायण ही चार पुत्र हुए। वे तेजस्वी तथा माता-पिता के सद्गुणों के अनुरूप थे। उन चारों पुत्रों के नाम 'देवप्रिय', 'प्रियमेधा', 'संस्कृत' और 'सुवृत' थे। रत्नमाल पर्वत पर 'दूषण' नाम वाले धर्म विरोधी एक असुर ने वेद, धर्म तथा धर्मात्माओं पर आक्रमण कर दिया। उस असुर को ब्रह्मा से अजेयता का वर मिला था। सबको सताने के बाद अन्त में उस असुर ने भारी सेना लेकर अवन्ति (उज्जैन) के उन पवित्र और कर्मनिष्ठ ब्राह्मणों पर भी चढ़ाई कर दी। उस असुर की आज्ञा से चार भयानक दैत्य चारों दिशाओं में प्रलयकाल की आग के समान प्रकट हो गये।

उनके भयंकर उपद्रव से भी शिव जी पर विश्वास करने वाले वे ब्राह्मणबन्धु भयभीत नहीं हुए। अवन्ति नगर के निवासी सभी ब्राह्मण जब उस संकट में घबराने लगे, तब उन चारों शिवभक्त भाइयों ने उन्हें आश्वासन देते हुए कहा- 'आप लोग भक्तों के हितकारी भगवान शिव पर भरोसा रखें।' उसके बाद वे चारों ब्राह्मण-बन्धु शिव जी का पूजन कर उनके ही ध्यान में तल्लीन हो गये।

सेना सहित दूषण ध्यान मग्न उन ब्राह्मणों के पास पहुँच गया। उन ब्राह्मणों को देखते ही ललकारते हुए बोल उठा कि इन्हें बाँधकर मार डालो। वेदप्रिय के उन ब्राह्मण पुत्रों ने उस दैत्य के द्वारा कही गई बातों पर कान नहीं दिया और भगवान शिव के ध्यान में मग्न रहे। जब उस दुष्ट दैत्य ने यह समझ लिया कि हमारे डाँट-डपट से कुछ भी परिणाम निकलने वाला नहीं है, तब उसने ब्राह्मणों को मार डालने का निश्चय किया। उसने ज्योंही उन शिव भक्तों के प्राण लेने हेतु शस्त्र उठाया, त्योंही उनके द्वारा पूजित उस पार्थिव लिंग की जगह गम्भीर आवाल के साथ एक गडढा प्रकट हो गया और तत्काल उस गड्ढे से विकट और भयंकर रूपधारी भगवान शिव प्रकट हो गये। दुष्टों का विनाश करने वाले तथा सज्जन पुरुषों के

कल्याणकर्त्ता वे भगवान शिव ही महाकाल के रूप में इस पृथ्वी पर विख्यात हुए।

उन्होंने दैत्यों से कहा- 'अरे दुष्टों! तुझ जैसे हत्यारों के लिए ही मैं 'महाकाल' प्रकट हुआ हूँ। जल्दी इन ब्राह्मणों के समीप से दूर भाग जाओ। इस प्रकार धमकाते हुए महाकाल भगवान शिव ने अपने हुँकार मात्र से ही उन दैत्यों को भस्म कर डाला। दूषण की कुछ सेना को भी उन्होंने मार गिराया और कुछ स्वयं ही भाग खड़ी हुई। इस प्रकार परमात्मा शिव ने दूषण नामक दैत्य का वध कर दिया।

जिस प्रकार सूर्य के निकलते ही अन्धकार छँट जाता है, उसी प्रकार भगवान आशुतोष शिव को देखते ही सभी दैत्य सैनिक पलायन कर गये। देवताओं ने प्रसन्नतापूर्वक अपनी दन्दुभियाँ बजायीं और आकाश से फूलों की वर्षा की। उन शिवभक्त ब्राह्मणों पर अति प्रसन्न भगवान शंकर ने उन्हें आश्वस्त करते हुए कहा कि 'मै महाकाल महेश्वर तुम लोगों पर प्रसन्न हूँ, तुम लोग वर मांगो।' महाकालेश्वर की वाणी सुनकर भक्ति भाव से पूर्ण उन ब्राह्मणों ने हाथ जोड़कर विनम्रतापूर्वक कहा- 'दुष्टों को दण्ड देने वाले महाकाल! शम्भो! आप हम सबको इस संसार-सागर से मुक्त कर दें। हे भगवान शिव! आप आम जनता के कल्याण तथा उनकी रक्षा करने के लिए यहीं हमेशा के लिए विराजिए। प्रभो! आप अपने दर्शनार्थी मनुष्यों का सदा उद्धार करते रहें।' भगवान शंकर ने उन ब्राह्माणों को सद्गति प्रदान की और अपने भक्तों की सुरक्षा के लिए उस गड्ढे में स्थित हो गये। उस गड्ढे के चारों ओर की लगभग तीन-तीन किलोमीटर भूमि लिंग रूपी भगवान शिव की स्थली बन गई। ऐसे भगवान शिव इस पृथ्वी पर महाकालेश्वर के नाम से प्रसिद्ध हुए।

महाकालेश्वर ज्योतिर्लिंग का दर्शन करने से स्वप्न में भी किसी प्रकार का दुःख अथवा संकट नहीं आता है। जो कोई भी मनुष्य सच्चे मन से महाकालेश्वर लिंग की उपासना करता है, उसकी सारी मनोकामनाएँ पूर्ण हो जाती हैं और वह परलोक में मोक्षपद को प्राप्त करता है:

महाकालेश्वरो नाम शिवः ख्यातश्च भूतले।
तं दुष्ट्वा न भवेत् स्वप्ने किंचिददुःखमपि द्विजाः।।

यं यं काममपेदयैव तल्लिगं भजते तु यः ।
तं तं काममवाप्नेति लभेन्मोक्षं परत्र च।।

अन्य कथा

उज्जयिनी नगरी में महान शिवभक्त तथा जितेन्द्रिय चन्द्रसेन नामक एक राजा थे। उन्होंने शास्त्रों का गम्भीर अध्ययन कर उनके रहस्यों का ज्ञान प्राप्त किया था। उनके सदाचरण से प्रभावित होकर शिवजी के पार्षदों (गणों) में अग्रणी (मुख्य) मणिभद्र जी राजा चन्द्रसेन के मित्र बन गये। मणिभद्र जी ने एक बार राजा पर अतिशय प्रसन्न होकर राजा चन्द्रसेन को चिन्तामणि नामक एक महामणि प्रदान की। वह महामणि कौस्तुभ मणि और सूर्य के समान देदीप्यमान (चमकदार) थी। वह महा मणि देखने, सुनने तथा ध्यान करने पर भी, वह मनुष्यों को निश्चित ही मंगल प्रदान करती थी। राजा चनद्रसेन के गले में अमूल्य चिन्तामणि शोभा पा रही है, यह जानकार सभी राजाओं में उस मणि के प्रति लोभ बढ़ गया। चिन्तामणि के लोभ से सभी राजा क्षुभित होने लगे। उन राजाओं ने अपनी चतुरंगिणी सेना तैयार की और उस चिन्तामणि के लोभ में वहाँ आ धमके। चन्द्रसेन के विरुद्ध वे सभी राजा एक साथ मिलकर एकत्रित हुए थे और उनके साथ भारी सैन्यबल भी था। उन सभी राजाओं ने आपस में परामर्श करके रणनीति तैयार की और राजा चन्द्रसेन पर आक्रमण कर दिया।

सैनिकों सहित उन राजाओं ने चारों ओर से उज्जयिनी के चारों द्वारों को घेर लिया। अपनी पुरी को चारों ओर से सैनिकों द्वारा घिरी हुई देखकर राजा चन्द्रसेन महाकालेश्वर भगवान शिव की शरण में पहुँच गये। वे निश्छल मन से दृढ़ निश्चय के सथ उपवास-व्रत लेकर भगवान महाकाल की आराधना में जुट गये। उन दिनों उज्जयिनी में एक विधवा ग्वालिन

रहती थी, जिसको इकलौता पुत्र था। वह इस नगरी में बहुत दिनों से रहती थी। वह अपने उस पाँच वर्ष के बालक को लेकर महाकालेश्वर का दर्शन करने हेतु गई। उसने देखा कि राजा चन्द्रसेन वहाँ बड़ी श्रद्धाभक्ति से महाकाल की पूजा कर रहे हैं।

राजा के शिव पूजन का महोत्सव उसे बहुत ही आश्चर्यमय लगा। उसने पूजन को निहारते हुए भक्ति भावपूर्वक महाकाल को प्रणाम किया और अपने निवास स्थान पर लौट गयी। उस ग्वालिन माता के साथ उसके बालक ने भी महाकाल की पूजा का कौतूहलपूर्वक अवलोकन किया था। इसलिए घर वापस आकर उसने भी शिव जी का पूजन करने का विचार किया। वह एक सुन्दर-सा पत्थर ढूँढ़कर लाया और अपने निवास से कुछ ही दूरी पर किसी अन्य के निवास के पास एकान्त में रख दिया। उसने अपने मन में निश्चय करके उस पत्थर को ही शिवलिंग मान लिया। वह शुद्ध मन से भक्ति भावपूर्वक मानसिक रूप से गन्ध, धूप, दीप, नैवेद्य और अलंकार आदि जुटाकर, उनसे उस शिवलिंग की पूजा की। वह सुन्दर-सुन्दर पत्तों तथा फूलों को बार-बार पूजन के बाद उस बालक ने बार-बार भगवान के चरणों में मस्तक लगाया। बालक का चित्त भगवान के चरणों में आसक्त था और वह विह्वल होकर उनको दण्डवत कर रहा था।

उसी समय ग्वालिन ने भोजन के लिए अपने पुत्र को प्रेम से बुलाया। उधर उस बालक का मन शिव जी की पूजा में रमा हुआ था, जिसके कारण वह बाहर से बेसुध था। माता द्वारा बार-बार बुलाने पर भी बालक को भोजन करने की इच्छा नहीं हुई और वह भोजन करने नहीं गया तब उसकी माँ स्वयं उठकर वहाँ आ गयी। माँ ने देखा कि उसका बालक एक पत्थर के सामने आँखें बन्द करके बैठा है। वह उसका हाथ पकड़कर बार-बार खींचने लगी पर इस पर भी वह बालक वहाँ से नहीं उठा, जिससे उसकी माँ को क्रोध आया और उसने उसे ख़ूब पीटा। इस प्रकार खींचने और मारने-पीटने पर भी जब वह बालक वहाँ से नहीं हटा, तो माँ ने उस पत्थर को उठाकर दूर फेंक दिया। बालक द्वारा उस शिवलिंग पर चढ़ाई गई सामग्री को भी उसने नष्ट कर दिया। शिव जी का अनादर देखकर बालक

'हाय-हाय' करके रो पड़ा। क्रोध में आगबबूला हुई वह ग्वालिन अपने बेटे को डाँट-फटकार कर पुनः अपने घर में चली गई।

जब उस बालक ने देखा कि भगवान शिव जी की पूजा को उसकी माता ने नष्ट कर दिया, तब वह बिलख-बिलख कर रोने लगा। देव! देव! महादेव! ऐसा पुकारता हुआ वह सहसा बेहोश होकर पृथ्वी पर गिर पड़ा। उसकी आँखों से आँसुओं की झड़ी लग गई। कुछ देर बाद जब उसे चेतना आयी, तो उसने अपनी बन्द आँखें खोल दीं। उस बालक ने आँखें खोलने के बाद जो दृश्य देखा, उससे वह आश्चर्य में पड़ गया। भगवान शिव की कृपा से उस स्थान पर महाकाल का दिव्य मन्दिर खड़ा हो गया था।

मणियों के चमकीले खम्बे उस मन्दिर की शोभा बढा रहे थे। वहाँ के भूतल पर स्फटिक मणि जड़ दी गयी थी। तपाये गये दमकते हुए स्वर्ण-शिखर उस शिवालय को सुशोभित कर रहे थे। उस मन्दिर के विशाल द्वार, मुख्य द्वार तथा उनके कपाट सुवर्ण निर्मित थे। उस मन्दिर के सामने नीलमणि तथा हीरे जड़े बहुत से चबूतरे बने थे। उस भव्य शिवालय के भीतर मध्य भाग में (गर्भगृह) करुणावरुणालय, भूतभावन, भोलानाथ भगवान शिव का रत्नमय लिंग प्रतिष्ठित हुआ था। ग्वालिन के उस बालक ने शिवलिंग को बड़े ध्यानपूर्वक देखा उसके द्वारा चढ़ाई गई सभी पूजन-सामग्री उस शिवलिंग पर सुसज्जित पड़ी हुई थी। उस शिवलिंग को तथा उसपर उसके ही द्वारा चढ़ाई पूजन-सामग्री को देखते-देखते वह बालक उठ खड़ा हुआ।

उसे मन ही मन आश्चर्य तो बहुत हुआ, किन्तु वह परमान्द सागर में गोते लगाने लगा। उसके बाद तो उसने शिव जी की ढेर-सारी स्तुतियाँ कीं और बार-बार अपने मस्तक को उनके चरणों में लगाया। उसके बाद जब शाम हो गयी, तो सूर्यास्त होने पर वह बालक शिवालय से निकल कर बाहर आया और अपने निवास स्थल को देखने लगा। उसका निवास देवताओं के राजा इन्द्र के समान शोभा पा रहा था। वहाँ सब कुछ शीघ्र ही सुवर्णमय हो गया था, जिससे वहाँ की विचित्र शोभा हो गई थी। परम

उज्ज्वल वैभव से सर्वत्र प्रकाश हो रहा था। वह बालक सब प्रकार की शोभाओं से सम्पन्न उस घर के भीतर प्रविष्ट हुआ। उसने देखा कि उसकी माता एक मनोहर पलंग पर सो रही हैं। उसके अंगों में बहुमूल्य रत्नों के अलंकार शोभा पा रहे हैं।

आश्चर्य और प्रेम में विह्वल उस बालक ने अपनी माता को बड़े ज़ोर से उठाया। उसकी माता भी भगवान शिव की कृपा प्राप्त कर चुकी थी। जब उस ग्वालिन ने उठकर देखा, तो उसे सब कुछ अपूर्व 'विलक्षण' सा देखने को मिला। उसके आनन्द का ठिकाना न रहा। उसने भावविभोर होकर अपने पुत्र को छाती से लगा लिया। अपने बेटे के भूतेश शिव के कृपा प्रसाद का सम्पूर्ण वर्णन सुनकर उस ग्वालिन ने राजा चन्द्रसेन को सूचित किया। निरन्तर भगवान शिव के भजन-पूजन में लगे रहने वाले राजा चन्द्रसेन अपना नित्य-नियम पूरा कर रात्रि के समय पहुँचे। उन्होंने भगवान शंकर को सन्तुष्ट करने वाले ग्वालिन के पुत्र का वह प्रभाव देखा। उज्जयिनि को चारों ओर से घेर कर युद्ध के लिए खड़े उन राजाओं ने भी गुप्तचरों के मुख से प्रात:काल उस अद्‌भुत वृत्तान्त को सुना।

इस विलक्षण घटना को सुनकर सभी नरेश आश्चर्यचकित हो उठे। उन राजाओं ने आपस में मिलकर पुन: विचार-विमर्श किया। परस्पर बातचीत में उन्होंने कहा कि राजा चन्द्रसेन महान शिव भक्त है, इसलिए इन पर विजय प्राप्त करना अत्यन्त कठिन है। ये सभी प्रकार से निर्भय होकर महाकाल की नगरी उज्जयिनी का पालन-पोषण करते हैं। जब इस नगरी का एक छोटा बालक भी ऐसा शिवभक्त है, तो राजा चन्द्रसेन का महान शिवभक्त होना स्वाभाविक ही है। ऐसे राजा के साथ विरोध करने पर निशचय ही भगवान शिव क्रोधित हो जाएँगे। शिव के क्रोध करने पर तो हम सभी नष्ट ही हो जाएँगे। इसलिए हमें इस नरेश से दुश्मनी न करके मेल-मिलाप ही कर लेना चाहिए, जिससे भगवान महेश्वर की कृपा हमें भी प्राप्त होगी:

ईदृशाशिशशवो यस्य पुयर्या सन्ति शिवव्रता:।

स राजा चन्द्रसेनस्तु महाशंकरसेवक:।।

नूनमस्य विरोधेन शिव: क्रोधं करिष्यति।
तत्क्रोधाद्धि वयं सर्वे भविष्यामो विनष्टका:।।

तस्मादनेन राज्ञा वै मिलाय: कार्य एव हि।
एवं सति महेशान: करिष्यति कृपा पराम्।।

युद्ध के लिए उज्जयिनी को घेरे उन राजाओं का मन भगवान शिव के प्रभाव से निर्मल हो गया और शुद्ध हृदय से सभी ने हथियार डाल दिये। उनके मन से राजा चन्द्रसेन के प्रति बैर भाव निकल गया और उन्होंने महाकालेश्वर पूजन किया। उसी समय परम तेजस्वी श्री हनुमान वहाँ प्रकट हो गये। उन्होंने गोप-बालक को अपने हृदय से लगाया और राजाओं की ओर देखते हुए कहा- 'राजाओं! तुम सब लोग तथा अन्य देहधारीगण भी ध्यानपूर्वक हमारी बातें सुनें। मैं जो बात कहूँगा उससे तुम सब लोगों का कल्याण होगा। उन्होंने बताया कि 'शरीरधारियों के लिए भगवान शिव से बढ़कर अन्य कोई गति नहीं है अर्थात महेश्वर की कृपा-प्राप्ति ही मोक्ष का सबसे उत्तम साधन है। यह परम सौभाग्य का विषय है कि इस गोप कुमार ने शिवलिंग का दर्शन किया और उससे प्रेरणा लेकर स्वयं शिव की पूजा में प्रवृत्त हुआ। यह बालक किसी भी प्रकार का लौकिक अथवा वैदिक मन्त्र नहीं जानता है, किन्तु इसने बिना मन्त्र का प्रयोग किये ही अपनी भक्ति निष्ठा के द्वारा भगवान शिव की आराधना की और उन्हें प्राप्त कर लिया। यह बालक अब गोप वंश की कीर्ति को बढ़ाने वाला तथा उत्तम शिवभक्त हो गया है।

भगवान शिव की कृपा से यह इस लोक के सम्पूर्ण भोगों का उपभोग करेगा और अन्त में मोक्ष को प्राप्त कर लेगा। इसी बालक के कुल में इससे आठवीं पीढ़ी में महायशस्वी नन्द उत्पन्न होंगे और उनके यहाँ ही साक्षात नारायण का प्रादुर्भाव होगा। वे भगवान नारायण ही नन्द के पुत्र के रूप में प्रकट होकर श्रीकृष्ण के नाम से जगत में विख्यात होंगे। यह गोप

बालक भी, जिस पर कि भगवान शिव की कृपा हुई है, 'श्रीकर' गोप के नाम से विशेष प्रसिद्धि प्राप्त करेगा। शिव भक्त हनुमान शिव के ही प्रतिनिधि वानरराज हनुमान जी ने समस्त राजाओं सहित राजा चन्द्रसेन को अपनी कृपादृष्टि से देखा। उसके बाद अतीव प्रसन्नता के साथ उन्होंने गोप बालक श्रीकर को शिव जी की उपासना के सम्बन्ध में बताया। पूजा-अर्चना की जो विधि और आचार-व्यवहार भगवान शंकर को विशेष प्रिय है, उसे भी श्री हनुमान जी ने विस्तार से बताया। अपना कार्य पूरा करने के बाद वे समस्त भूपालों तथा राजा चन्द्रसेन से और गोप बालक श्रीकर से विदा लेकर वहीं पर तत्काल अर्न्तधान हो गये। राजा चन्द्रसेन की आज्ञा प्राप्त कर सभी नरेश भी अपनी राजधानियों को वापस हो गये। इस प्रकार 'महाकाल' नामक यह शिवलिंग शिव भक्तों का परम आश्रय है, जिसकी पूजा से भक्त-वत्सल महेश्वर शीघ्र प्रसन्न होते हैं।

ये भगवान शिव दुष्टों के संहारक हैं, इसलिए इनका नाम 'महाकाल' है। ये काल अर्थात मृत्यु को भी जीतने वाले हैं, इसलिए इन्हें 'महाकालेश्वर' कहा जाता हैं। भगवान शिव भयंकर 'हुँकार' के साथ प्रकट हुए थे, इसलिए भी इनका नाम 'महाकाल' से प्रसिद्ध हुआ है।

## उज्जैन का इतिहास

उज्जैन की प्रसिद्धि सदियों से एक पवित्र व धार्मिक नगर के रूप में रही है। लंबे समय तक यहाँ न्याय के राजा महाराजा विक्रमादित्य का शासन रहा। महाकवि कालिदास, बाणभट्ट आदि की कर्मस्थली भी यही नगर रहा। श्रीकृष्ण की शिक्षा भी यहीं हुई थी। दैवज्ञ वराहमिहिर की जन्मभूमि, महर्षि सांदीपनि की तपोभूमि, भर्तृहरि की योगस्थली, हरीशचंद्र की मोक्षभूमि आदि के रूप में उज्जैन की प्रसिद्धि रही है। उज्जैन का वर्णन कई ग्रंथों व पुराणों जैसे शिव महापुराण, स्कंदपुराण आदि में हुआ है।

## यातायात-व्यवस्था और सुरक्षा

सुविधा की दृष्टि से तीर्थयात्री दर्शनार्थियों को पंक्ति में होकर सरोवर के किनारे किनारे से ऊपर की मंज़िल में जाना पड़ता है। वहाँ से संकरी गली की सीढ़ियाँ उतरकर मन्दिर की निचले सतह पर आना पड़ता है जहाँ भूतल पर महाकालेश्वर का ज्योतिर्लिंग स्थापित है। यह शिवलिंग समतल भूमि से भी कुछ नीचे है। यहाँ के रामघाट और कोटितीर्थ नामक कुण्डों में भी स्नान किया जाता है तथा पितरों का श्राद्ध भी विहित है अर्थात यहाँ पितृश्राद्ध करने का भी विधान है। इन कुण्डों के पास ही अगस्त्येश्वर, कोढ़ीश्वर, केदारेश्वर तथा हरसिद्धि देवी आदि के दर्शन करते हुए महाकालेश्वर के दर्शन हेतु जाया जाता है। मंदिर एक परकोटे के भीतर स्थित है। गर्भगृह तक पहुँचने के लिए एक सीढ़ीदार रास्ता है। इसके ठीक उपर एक दूसरा कक्ष है जिसमें ओंकारेश्वर शिवलिंग स्थापित है। मंदिर का क्षेत्रफल १०.७७ x १०.७७ वर्गमीटर और ऊंचाई २८.७१ मीटर है।

महाशिवरात्रि एवं श्रावण मास में हर सोमवार को इस मंदिर में अपार भीड़ होती है। मंदिर से लगा एक छोटा-सा जलस्रोत है जिसे कोटितीर्थ कहा जाता है। ऐसी मान्यता है कि इल्तुत्मिश ने जब मंदिर को तुड़वाया तो शिवलिंग को इसी कोटितीर्थ में फिकवा दिया था। बाद में इसकी पुनर्प्रतिष्ठा करायी गयी। सन १९६८ के सिंहस्थ महापर्व के पूर्व मुख्य द्वार का विस्तार कर सुसज्जित कर लिया गया था। इसके अलावा निकासी के लिए एक अन्य द्वार का निर्माण भी कराया गया था। लेकिन दर्शनार्थियों की अपार भीड़ को दृष्टिगत रखते हुए बिड़ला उद्योग समूह के द्वारा १९८० के सिंहस्थ के पूर्व एक विशाल सभा मंडप का निर्माण कराया। महाकालेश्वर मंदिर की व्यवस्था के लिए एक प्रशासनिक समिति का गठन किया गया है जिसके निर्देशन में यहाँ की व्यवस्था सुचारु रूप से चल रही है। हाल ही में इसके ११८ शिखरों पर १६ किलो स्वर्ण की परत चढ़ाई गई है। अब मंदिर में दान के लिए इंटरनेट सुविधा भी चालू की गई है।

<u>मुख्य आकर्षण</u>

महाकालेश्वर मंदिर के मुख्य आकर्षणों में भगवान महाकाल की भस्म आरती, नागचंद्रेश्वर मंदिर, भगवान महाकाल की शाही सवारी आदि है। प्रतिदिन अलसुबह होने वाली भगवान की भस्म आरती के लिए कई महीनों पहले से ही बुकिंग होती है। इस आरती की खासियत यह है कि इसमें ताजा मुर्दे की भस्म से भगवान महाकाल का श्रृंगार किया जाता है लेकिन आजकल इसका स्थान गोबर के कंडे की भस्म का उपयोग किया जाता है परंतु आज भी यही कहा जाता है कि यदि आपने महाकाल की भस्म आरती नहीं देखी तो आपका महाकालेश्वर दर्शन अधूरा है।

महाकालेश्वर मंदिर के ऊपरी तल पर स्थित प्राचीन व चमत्कारी नागचंद्रेश्वर मंदिर वर्ष में एक बार केवल नागपंचमी को ही श्रद्धालुओं के दर्शनार्थ खोला जाता है। यहाँ हर वर्ष श्रावण मास में भगवान महाकाल की शाही सवारी निकाली जाती हैं। हर सोमवती अमावस्या पर उज्जैन में श्रद्धालु पुण्य सलिला शिप्रा स्नान के लिए पधारते हैं। फाल्गुनकृष्ण पक्ष की पंचमी से लेकर महाशिवरात्रि तक तथा नवरात्रि महोत्सव पर यहाँ महाकालेश्वर ज्योतिर्लिंग के विशेष दर्शन, पूजन व रूद्राभिषेक होता है।

<u>सिंहस्थ मेला</u>

उज्जैन का सिंहस्थ मेला बहुत ही दुर्लभ संयोग लेकर आता है इसलिए इसका महत्व और भी अधिक बढ़ जाता है। इस दिन यहाँ दस दुर्लभ योग होते हैं, जैसे : वैशाख माह, मेष राशि पर सूर्य, सिंह पर बृहस्पति, स्वाति नक्षत्र, शुक्ल पक्ष, पूर्णिमा आदि। प्रति बारह वर्ष में पड़ने वाला कुंभ मेला यहाँ का सबसे बड़ा मेला है, जिसमें देश-विदेश से आए साधु-संतों व श्रद्धालुओं का जमावड़ा लगता है।

सिंहस्थ मेले के बारे में यह कहा जाता है कि जब समुद्र मंथन के पश्चात देवता अमृत कलश को दानवों से बचाने के लिए वहाँ से पलायन कर रहे थे, तब उनके हाथों में पकड़े अमृत कलश से अमृत की बूँद धरती पर

जहाँ-जहाँ भी गिरी थी, वो स्थान पवित्र तीर्थ बन गए। उन्हीं स्थानों में से एक उज्जैन है। यहाँ प्रति बारह वर्ष में सिंहस्थ मेला आयोजित होता है।

## तीर्थ नगरी उज्जैन के अन्य मंदिर

भगवान महाकाल की नगरी उज्जैन व उसके आसपास के गाँवों में कई प्रसिद्ध मंदिर व आश्रम है, जिनमें चिंतामण गणेश मंदिर, कालभैरव, गोपाल मंदिर, हरसिद्धि मंदिर, त्रिवेणी संगम, सिद्धवट, मंगलनाथ, इस्कॉन मंदिर आदि प्रमुख है। इन स्थानों पर पहुँचने के लिए महाकालेश्वर मंदिर से बस व टैक्सी सुविधा उपलब्ध है।

## पहुँचने के साधन

उज्जैन पहुँचने के लिए आपको इंदौर, रतलाम, भोपाल आदि स्थानों से बस, ट्रेन व टैक्सी की सुविधा उपलब्ध है। यहाँ का नजदीकी हवाईअड्डा देवी अहिल्या एयरपोर्ट इंदौर है। महाकालेश्वर ज्योतिर्लिंग की प्रात:काल की पूजा में अनिवार्य रूप से सवा मन चिता की भस्म सम्मिलित की जाती है। चिता की भस्म से विभूषित महाकालेश्वर का दर्शन अत्यन्त पुण्यदायी होता है। यहाँ मध्य रेलवे की भोपाल - उज्जैन और आगरा - उज्जैन रेलवे लाइनें हैं तथा पश्चिमी रेलवे की नागदा - उज्जैन तथा फतेहाबाद - उज्जैन रेलमार्ग की व्यवस्था हैं।

# ओम्कारेश्वर

ओम्कारेश्वर मध्य प्रदेश के खंडवा जिले में स्थित है। यह नर्मदा नदी के बीच मन्धाता या शिवपुरी नामक द्वीप पर स्थित है। यह भगवान शिव के बारह ज्योतिर्लिंगओं में से एक है। यह यहां के मोरटक्का गांव से लगभग 12 मील (20 कि.मी.) दूर बसा है। यह द्वीप हिन्दू पवित्र चिन्ह ॐ के आकार में बना है।

ॐकारेश्वर का निर्माण नर्मदा नदी से स्वतः ही हुआ है। यह नदी भारत की पवित्रतम नदियों में से एक है, और अब इस पर विश्व का सर्वाधिक बड़ा बांध परियोजना का निर्माण हो रहा है। जिस ओंकार शब्द का उच्चारण सर्वप्रथम सृष्टिकर्ता विधाता के मुख से हुआ, वेद का पाठ इसके उच्चारण किए बिना नहीं होता है। इस ओंकार का भौतिक विग्रह ओंकार क्षेत्र है। इसमें 68 तीर्थ हैं।

यहाँ 33 प्रकार के देवता परिवार सहित निवास करते हैं तथा 2 ज्योतिस्वरूप लिंगों सहित 108 प्रभावशाली शिवलिंग हैं। मध्यप्रदेश में देश के प्रसिद्ध 12 ज्योतिर्लिंगों में से 2 ज्योतिर्लिंग विराजमान हैं। एक उज्जैन में महाकाल के रूप में और दूसरा ओंकारेश्वर में ममलेश्वर (अमलेश्वर) के रूप में विराजमान हैं।

ओंकारेश्वर नगरी का मूल नाम 'मान्धाता' है। कहानी यह है की राजा मान्धाता ने यहाँ नर्मदा किनारे इस पर्वत पर घोर तपस्या कर भगवान शिव को प्रसन्न किया और शिवजी के प्रकट होने पर उनसे यहीं निवास करने का वरदान माँग लिया। तभी से उक्त प्रसिद्ध तीर्थ नगरी ओंकार-मान्धाता के रूप में पुकारी जाने लगी।

नर्मदा क्षेत्र में ओंकारेश्वर सर्वश्रेष्ठ तीर्थ है। शास्त्र मान्यता है कि कोई भी तीर्थयात्री देश के भले ही सारे तीर्थ कर ले किन्तु जब तक वह ओंकारेश्वर आकर किए गए तीर्थों का जल लाकर यहाँ नहीं चढ़ाता उसके सारे तीर्थ अधूरे माने जाते हैं। ओंकारेश्वर तीर्थ के साथ नर्मदाजी का भी विशेष महत्व है। शास्त्र मान्यता के अनुसार जमुनाजी में 15 दिन का स्नान तथा गंगाजी में 7 दिन का स्नान जो फल प्रदान करता है, उतना पुण्यफल नर्मदाजी के दर्शन मात्र से प्राप्त हो जाता है। ओंकारेश्वर तीर्थ क्षेत्र में चौबीस अवतार, मार्कण्डेय शिला, मार्कण्डेय संन्यास आश्रम, कुबेरेश्वर महादेव, चन्द्रमोलेश्वर महादेव के मंदिर भी दर्शनीय हैं।

## ओंकारेश्वर मंदिर का इतिहास

इस मंदिर में शिव भक्त कुबेर ने तपस्या की थी तथा शिवलिंग की स्थापना की थी। जिसे शिव ने देवताओ का धनपति बनाया था। कुबेर के स्नान के लिए शिवजी ने अपनी जटा के बाल से कावेरी नदी उत्पन्न की थी। यह नदी कुबेर मंदिर के बाजू से बहकर नर्मदाजी में मिलती है, जिसे छोटी परिक्रमा में जाने वाले भक्तो ने प्रत्यक्ष प्रमाण के रूप में देखा है, यही

कावेरी ओमकार पर्वत का चक्कर लगते हुए संगम पर वापस नर्मदाजी से मिलती हैं, इसे ही नर्मदा कावेरी का संगम कहते है। धनतेरस पूजन इस मंदिर पर प्रतिवर्ष दिवाली की बारस की रात को ज्वार चढाने का विशेष महत्त्व है इस रात्रि को जागरण होता है तथा धनतेरस की सुबह ४ बजे से अभिषेक पूजन होता हैं इसके पश्चात् कुबेर महालक्ष्मी का महायज्ञ, हवन भंडारा होता है लक्ष्मी वृद्धि पेकेट (सिद्धि) वितरण होता है, जिसे घर पर ले जाकर दीपावली की अमावस को विधि अनुसार धन रखने की जगह पर रखना होता हैं, जिससे घर में प्रचुर धन के साथ सुख शांति आती हैं इस अवसर पर हजारों भक्त दूर दूर से आते है व् कुबेर का भंडार प्राप्त कर प्रचुर धन के साथ सुख शांति पाते हैं

<u>नवनिर्मित मंदिर</u>

प्राचीन मंदिर ओम्कारेश्वर बांध में जलमग्न हो जाने के कारण भक्त श्री चैतरामजी चौधरी,ग्राम - कातोरा ( गुर्जर दादा ) के अथक प्रयास से नवीन मंदिर का निर्माण बांध के व् ममलेश्वर ज्योतिर्लिंग के बीच नर्मदाजी के किनारे २००६-०७ बनाया गया हैं। भगवान के महान भक्त अम्बरीष और मुचुकुन्द के पिता सूर्यवंशी राजा मान्धाता ने इस स्थान पर कठोर तपस्या करके भगवान शंकर को प्रसन्न किया था। उस महान पुरुष मान्धाता के नाम पर ही इस पर्वत का नाम मान्धाता पर्वत हो गया।

ओंकारेश्वर लिंग किसी मनुष्य के द्वारा गढ़ा, तराशा या बनाया हुआ नहीं है, बल्कि यह प्राकृतिक शिवलिंग है। इसके चारों ओर हमेशा जल भरा रहता है। प्राय: किसी मन्दिर में लिंग की स्थापना गर्भ गृह के मध्य में की जाती है और उसके ठीक ऊपर शिखर होता है, किन्तु यह ओंकारेश्वर लिंग मन्दिर के गुम्बद के नीचे नहीं है। इसकी एक विशेषता यह भी है कि मन्दिर के ऊपरी शिखर पर भगवान महाकालेश्वर की मूर्ति लगी है। कुछ लोगों की मान्यता है कि यह पर्वत ही ओंकाररूप है।

# केदारनाथ

केदारनाथ मन्दिर भारत के उत्तराखण्ड राज्य के रूद्रप्रयाग जिले में स्थित है। उत्तराखण्ड में हिमालय पर्वत की गोद में केदारनाथ मन्दिर बारह ज्योतिर्लिंग में सम्मिलित होने के साथ चार धाम और पंच केदार में से भी एक है। यहाँ की प्रतिकूल जलवायु के कारण यह मन्दिर अप्रैल से नवंबर माह के मध्य ही दर्शन के लिए खुलता है। पत्थरों से बने कत्यूरी शैली से बने इस मन्दिर के बारे में कहा जाता है कि इसका निर्माण पाण्डव वंश के जनमेजय ने कराया था। यहाँ स्थित स्वयम्भू शिवलिंग अति प्राचीन है। आदि शंकराचार्य ने इस मन्दिर का जीर्णोद्धार करवाया।

जून 2013 के दौरान भारत के उत्तराखण्ड और हिमाचल प्रदेश राज्यों में अचानक आई बाढ़ और भूस्खलन के कारण केदारनाथ सबसे अधिक प्रभावित क्षेत्र रहा। मंदिर की दीवारें गिर गई और बाढ़ में बह गयी। इस ऐतिहासिक मन्दिर का मुख्य हिस्सा और सदियों पुराना गुंबद सुरक्षित रहे लेकिन मन्दिर का प्रवेश द्वार और उसके आस-पास का इलाका पूरी तरह तबाह हो गया। यह मन्दिर एक छह फीट ऊँचे चौकोर चबूतरे पर बना हुआ है। मन्दिर में मुख्य भाग मण्डप और गर्भगृह के चारों ओर प्रदक्षिणा पथ है। बाहर प्रांगण में नन्दी बैल वाहन के रूप में विराजमान हैं।

पूजा-अर्चना

प्रात:काल में शिव-पिण्ड को प्राकृतिक रूप से स्नान कराकर उस पर घी-लेपन किया जाता है। तत्पश्चात धूप-दीप जलाकर आरती उतारी जाती है। इस समय यात्री-गण मंदिर में प्रवेश कर पूजन कर सकते हैं, लेकिन संध्या के समय भगवान का श्रृंगार किया जाता है। उन्हें विविध प्रकार के चित्ताकर्षक ढंग से सजाया जाता है। भक्तगण दूर से केवल इसका दर्शन ही कर सकते हैं। केदारनाथ के पुजारी मैसूर के जंगम ब्राह्मण ही होते हैं।

केदारेश्वर ज्योतिर्लिंग गिरिराज हिमालय की केदार नामक चोटी पर स्थित है देश के बारह ज्योतिर्लिंगों में सर्वोच्च । केदारनाथ धाम और मंदिर तीन तरफ पहाड़ों से घिरा है। एक तरफ है करीब 22 हजार फुट ऊंचा केदारनाथ, दूसरी तरफ है 21 हजार 600 फुट ऊंचा खर्चकुंड और तीसरी तरफ है 22 हजार 700 फुट ऊंचा भरतकुंड। न सिर्फ तीन पहाड़ बल्कि पांच नदियों का संगम भी है यहां- मंदाकिनी, मधुगंगा, क्षीरगंगा, सरस्वती और स्वर्णगौरी। इन नदियों में से कुछ का अब अस्तित्व नहीं रहा लेकिन अलकनंदा की सहायक मंदाकिनी आज भी मौजूद है। इसी के किनारे है केदारेश्वर धाम। यहां सर्दियों में भारी बर्फ और बारिश में जबरदस्त पानी रहता है।

यह उत्तराखंड का सबसे विशाल शिव मंदिर है, जो कटवां पत्थरों के विशाल शिलाखंडों को जोड़कर बनाया गया है। ये शिलाखंड भूरे रंग के हैं। मंदिर लगभग 6 फुट ऊंचे चबूतरे पर बना है। इसका गर्भगृह अपेक्षाकृत प्राचीन है जिसे 8वीं शताब्दी के लगभग का माना जाता है।

मंदिर के गर्भगृह में अर्धा के पास चारों कोनों पर चार सुदृढ़ पाषाण स्तंभ हैं, जहां से होकर प्रदक्षिणा होती है। अर्धा, जो चौकोर है, अंदर से पोली है और अपेक्षाकृत नवीन बनी है। सभामंडप विशाल एवं भव्य है। उसकी छत चार विशाल पाषाण स्तंभों पर टिकी है। विशालकाय छत एक ही पत्थर की बनी है। गवाक्षों में आठ पुरुष प्रमाण मूर्तियां हैं, जो अत्यंत कलात्मक हैं।

85 फुट ऊंचा, 187 फुट लंबा और 80 फुट चौड़ा है केदारनाथ मंदिर। इसकी दीवारें 12 फुट मोटी हैं और बेहद मजबूत पत्थरों से बनाई गई है। मंदिर को 6 फुट ऊंचे चबूतरे पर खड़ा किया गया है। यह आश्चर्य ही है कि इतने भारी पत्थरों को इतनी ऊंचाई पर लाकर तराशकर कैसे मंदिर की शक्ल दी गई होगी। खासकर यह विशालकाय छत कैसे खंभों पर रखी गई। पत्थरों को एक-दूसरे में जोड़ने के लिए इंटरलॉकिंग तकनीक का इस्तेमाल किया गया है। यह मजबूती और तकनीक ही मंदिर को नदी के बीचोबीच खड़े रखने में कामयाब हुई है।

<u>पौराणिक कथा</u>

पौराणिक कथा  अनुसार हिमालय के केदार श्रृंग पर भगवान विष्णु के अवतार महातपस्वी नर और नारायण ऋषि तपस्या करते थे। उनकी आराधना से प्रसन्न होकर भगवान शंकर प्रकट हुए और उनके प्रार्थनानुसार ज्योतिर्लिंग के रूप में सदा वास करने का वर प्रदान किया। यह स्थल केदारनाथ पर्वतराज हिमालय के केदार नामक श्रृंग पर अवस्थित है।

यह मंदिर मौजूदा मंदिर के पीछे सर्वप्रथम पांडवों ने बनवाया था, लेकिन वक्त के थपेड़ों की मार के चलते यह मंदिर लुप्त हो गया। बाद में 8वीं शताब्दी में आदिशंकराचार्य ने एक नए मंदिर का निर्माण कराया, जो 400 वर्ष तक बर्फ में दबा रहा।

मंदिर के कपाट खुलने का समय

दीपावली महापर्व के दूसरे दिन (पड़वा) के दिन शीत ऋतु में मंदिर के द्वार बंद कर दिए जाते हैं। 6 माह तक दीपक जलता रहता है। पुरोहित ससम्मान पट बंद कर भगवान के विग्रह एवं दंडी को 6 माह तक पहाड़ के नीचे ऊखीमठ में ले जाते हैं। 6 माह बाद मई माह में केदारनाथ के कपाट खुलते हैं तब उत्तराखंड की यात्रा आरंभ होती है।

6 माह मंदिर और उसके आसपास कोई नहीं रहता है, लेकिन आश्चर्य की 6 माह तक दीपक भी जलता रहता और निरंतर पूजा भी होती रहती है। कपाट खुलने के बाद यह भी आश्चर्य का विषय है कि वैसी ही साफ-सफाई मिलती है जैसे छोड़कर गए थे।

केदारनाथ की बड़ी महिमा है। उत्तराखण्ड में बद्रीनाथ और केदारनाथ-ये दो प्रधान तीर्थ हैं, दोनो के दर्शनों का बड़ा ही माहात्म्य है। केदारनाथ के संबंध में लिखा है कि जो व्यक्ति केदारनाथ के दर्शन किये बिना बद्रीनाथ की यात्रा करता है, उसकी यात्रा निष्फल जाती है और केदारनाथ सहित नर-नारायण-मूर्ति के दर्शन का फल समस्त पापों के नाश पूर्वक जीवन मुक्ति की प्राप्ति बतलाया गया है।

# भीमाशंकर

भीमाशंकर मंदिर, भीमाशंकर गाँव में स्थित है जिसे पवित्र ज्योतिर्लिंग के नाम से भी जाना जाता है और भगवा शिव को समर्पित है। नाना फड़नवीस द्वारा बनवाया गया यह मंदिर महाराष्ट्र के पाँच ज्योतिर्लिंगों के समूह तथा देश के बारह ज्योतिर्लिंगों में से है ।भारतवर्ष में प्रकट हुए भगवान शंकर के बारह ज्योतिर्लिंग में श्री भीमशंकर ज्योतिर्लिंग का छठा स्थान हैं।

इस ज्योतिर्लिंग में कुछ मतभेद हैं। द्वादश ज्योतिर्लिंग स्तोत्र में 'डाकिन्यां भीमशंकरम्' ऐसा लिखा है, जिसमें 'डाकिनी' शब्द से स्थान का स्पष्ट उल्लेख नहीं हो पाता है। इसके अनुसार भीमशंकर ज्योतिर्लिंग मुम्बई से पूरब और पूना से उत्तर भीमा नदी के तट पर अवस्थित है।

श्री भीमशङ्कर का स्थान मुंबई से पूर्व और पूना से उत्तर भीमा नदी के किनारे सह्याद्रि पर्वत पर है। यह स्थान नासिक से लगभग 120 मील दूर है। यह भोरगिरि गांव खेड़ से 50 कि.मि. उत्तर-पश्चिम पुणे से 110 कि.मि में स्थित है। यह पश्चिमी घाट के सह्याद्रि पर्वत में स्थित है। यहीं से भीमा नदी भी निकलती है। यह दक्षिण पश्चिम दिशा में बहती हुई रायचूर जिले में कृष्णा नदी से जा मिलती है। यहां भगवान शिव का प्रसिद्ध ज्योतिर्लिंग है। सह्याद्रि पर्वत के एक शिखर का नाम डाकिनी है। शिवपुराण की एक कथा के आधार पर भीमशङ्कर ज्योतिर्लिङ्ग को असम के कामरूप जिले में गुवाहाटी के पास ब्रह्मपुर पहाड़ी पर स्थित बतलाया जाता है। कुछ लोग मानते हैं कि नैनीताल जिले के काशीपुर नामक स्थान में स्थित विशाल शिवमंदिर भीमशंकर का स्थान है।

भीमशंकर महादेव काशीपुर में भगवान शिव का प्रसिद्ध मंदिर और तीर्थ स्थान है। यहां का शिवलिंग काफी मोटा है जिसके कारण इन्हे मोटेश्वर महादेव भी कहा जाता है। पुराणो में भी इसका वर्णन मिलता है। आसाम में शिव के द्वाद्श ज्योर्तिलिगों में एक भीमशंकर महादेव का मंदिर है। काशीपुर के मंदिर का उन्हीं का रुप बताया जाता है।

किवदंती है कि जब भगवान शिव सह्याद्री में रहे थे तो उन्होंने भीमा का रूप लेकर राक्षस त्रिपुरासुर का वध किया था। ऐसा कहा जाता है कि युद्ध के बाद भगवान शिव के पसीने से ही पवित्र भीमा नदी बनी। इस पवित्र ज्योतिर्लिंग की वास्तुकला नगर शैली की है।

यहाँ अनेक पांडुलिपियाँ हैं जो 13 वीं शताब्दी की हैं। इस परिसर में एक छोटा सा शनि मंदिर भी है जिसके बाजू में बड़ी घंटी है जो वास्तुकला की हेमान्द्पथी शैली को दर्शाती है। इस मंदिर के परिसर में महाशिवरात्रि के पावन अवसर पर बहुत भीड़ होती है।

## शिव पुराण में वर्णित कथा

शिव पुराण के अनुसार भीमशंकर ज्योतिर्लिंग असम प्रान्त के कामरूप जनपद में गुवाहाटी के पास ब्रह्मरूप पहाड़ी पर स्थित है। कुछ लोग तो उत्तराखंड प्रदेश के नैनीताल ज़िले में 'उज्जनक' स्थान पर स्थित भगवान शिव के विशाल मन्दिर को भी भीमशंकर ज्योतिर्लिंग कहते हैं।

श्री शिव महापुराण के कोटि रुद्र संहिता में श्री भीमशंकर ज्योतिर्लिंग के सम्बन्ध में इस प्रकार लिखा है– 'लोक हित की कामना से भगवान शंकर कामरूप देश में ज्योतिर्लिंग के रूप में प्रकट हुए। उनका वह कल्याणकारक स्वरूप बड़ा ही सुखदायी था। पूर्वकाल में भीम नामक एक महाबलशाली और पराक्रमी राक्षस उत्पन्न हुआ था। वह अत्याचारी राक्षस जगह-जगह धर्म का नाश करता हुआ सम्पूर्ण प्राणियों को सताया करता था। भयंकर बलशाली वह राक्षस कुम्भकर्ण के वीर्य और कर्कट की पुत्री कर्कटी के गर्भ से उत्पन्न हुआ था। भीम अपनी माता कर्कटी के साथ ही 'सह्य' नामक पर्वत पर निवास करता था। उसने अपने जीवन में अपने पिता को कभी नहीं देखा था।

एक दिन उसने आपनी माता से पूछा- 'माँ! तुम इस पर्वत पर अकेली क्यों रहती हो? मेरे पिताजी कौन हैं और कहाँ रहते हैं? मुझे ये सब बातें जानने की बड़ी इच्छा है, इसलिए तुम सच-सच बताओ'–

मात मे क: पिता कुत्र कथं वैकाकिनी स्थिता।
ज्ञातुमिच्छमि तत्सर्वं यथार्थं त्वं वदाधुना।।

तदनन्तर उसकी माता कर्कटी ने उसे विस्तार से बताया कि तुम्हारे पिता का नाम कुम्भकर्ण था, जो रावण के छोटे भाई थे। महाबलशाली और पराक्रमी उस वीर को भाई सहित श्रीराम ने मार डाला था। मेरे पिता अर्थात तुम्हारे नाना का नाम कर्कट और नानी का नाम पुष्कसी था। मेरे

पूर्व पति का नाम 'विराध' था, जिन्हें पहले ही श्रीराम ने मार डाला था। मैं अपने प्रिय स्वामी विराध के मारे जाने पर अपने माता-पिता के पास आकर रहने लगी थी, क्योंकि मेरा सहारा अन्य कोई नहीं था। एक दिन मेरे माता-पिता आहार की खोज में निकले और उन्होंने अगस्त्य मुनि के परम शिष्य तपस्वी सुतीक्ष्ण को अपना आहार बनाना चाहा, किन्तु वे ऋषि महान तपस्वी और महात्मा थे।

इसलिए उन्होंने कुपित होकर अपने तपोबल से मेरे माता-पिता को भस्म कर डाला। वे दोनों वहीं मर गये और मैं अकेली अनाथ हो गई। मुझ पर चारों तरफ से दु:ख का पहाड़ टूट पड़ा और मैं दु:खी होकर अकेली इस पर्वत पर रहने लगी। मेरा इस दुनिया में कोई अवलम्बन क्या सहारा भी न रहा और मैं आतुर होकर एकाकी ही किसी प्रकार अपना जीवन जी रही थी। एक दिन इस सुनसान पहाड़ पर राक्षसराज रावण के छोटे भाई महाबल और पराक्रम से युक्त कुम्भकर्ण आ गये। उन्होंने मेरे साथ बलात्कार किया और समागम के बाद वे मुझे यहीं छोड़कर पुन: लंका में चले गये। उसके बाद समय पूरा होने पर तुम्हारा जन्म हुआ। बेटा! तुम अपने पिता के समान ही साक्षात महाबली और पराक्रमी हो। तुम्हें ही देख-देखकर, तुम्हारे ही सहारे अब मैं अपना जीवन चला रही हूँ और किसी तरह समय बीत रहा है। अपनी माता कर्कटी के बात सुनकर भयानक पराक्रमी राक्षस कुपित हो उठा। उसने विचार किया कि विष्णु के साथ कैसा व्यवहार किया जाना चाहिए, उनसे प्रतिरोध (बदला) लेने का क्या उपाय है?

वह चिन्तित होकर अपनी माँ की बातों पर गम्भीरतापूर्वक विचार करने लगा- 'विष्णु ने मेरे पिता को मार डाला। मेरे नाना-नानी भी उनके ही भक्त के हाथों मारे गये। इतना ही नहीं विराध को भी उन्होंने ही मार डाला। निश्चित ही श्रीहरि ने मुझ पर बहुत ही अत्याचार किया है, अत्यधिक कष्ट दिया है। उसने निश्चय किया कि हरि द्वारा किये गये कृत्य का बदला वह अवश्य लेगा। उसने अपनी माता के सामने कहा कि यदि मैं अपने पिता का पुत्र हूँ, तो श्री हरि से अवश्य ही बदला लेकर रहूँगा, उन्हें भारी

कष्ट दूँगा। इस प्रकार निश्चय कर वह बलवान राक्षस अपनी शक्ति को और अधिक बढ़ाने के लिए तपस्या करने चला गया। उसने संकल्प लेकर ब्रह्माजी को प्रसन्न करने हेतु एक हज़ार वर्षों तक तप किया। वह मानसिक रूप से अपने इष्टदेव के ध्यान में ही मग्न रहता था। उसकी तपस्या, ध्यान और अर्चना-वन्दना से लोकपितामह ब्रह्मा जी प्रसन्न हो उठे। ब्रह्मा जी ने उसे वर देने की इच्छा से कहा- 'भीम! मैं तुम्हारी तपस्या और धैर्य से बहुत प्रसन्न हूँ और तुम्हें वर देना चाहता हूँ। इसलिए तुम अपना अभीष्ट वर मांगो।' तदनन्तर उस राक्षस ने कहा– 'देवेश्वर! यदि आप मेरे ऊपर सच में प्रसन्न हैं और मेरा भला करना चाहते हैं, तो आप मुझे अतुलनीय बल प्रदान कीजिए।

मुझे इतना बल और पराक्रम प्राप्त हो, जिसकी तुलना कहीं भी न हो सके।' इस प्रकार बोलते हुए राक्षस भीम ने बार-बार ब्रह्मा जी को प्रणाम किया। उसकी तपस्या से प्रभावित ब्रह्मा जी उसे अतुलनीय बल-प्राप्ति का वर देकर अपने धाम चले गये। ब्रह्मा जी से अतुलनीय बल प्राप्त करने के कारण वह राक्षस अत्यन्त प्रसन्न हो गया। उसने अपने निवास पर आकर अपनी माता जी को प्रणाम किया और अत्यन्त अहंकार के साथ उससे कहा– 'माँ! अब तुम मेरा बल और पराक्रम देखो। अब मैं इन्द्र इत्यादि देवताओं के साथ ही इनका सहयोग करने वाले महान श्री हरि का भी संहार कर डालूँगा। अपनी माँ से इस प्रकार कहने के बाद वीर राक्षस भीम ने इन्द्रादि देवताओं पर चढ़ाई कर दी। उसने उन सबको जीत लिया और उनके स्थान से उन्हें भगा दिया। उसके बाद तो उसने घोर युद्ध करके देवताओं का पक्ष लेने वाले श्रीहरि को भी परजित कर दिया।

उसके बाद भीम ने प्रसन्नतापूर्वक सम्पूर्ण पृथ्वी को जीतने का अभियान चलाया। वह सर्वप्रथम कामरूप देश के राजा सुदक्षिण को जीतने के लिए पहुँचा। उसने उस राजा के साथ भंयकर युद्ध किया। क्योंकि ब्रह्मा जी के वरदान से भीम के पास अतुलनीय शक्ति प्राप्त थी, इसलिए महावीर और शिव के परम भक्त सुदक्षिण युद्ध में परास्त हो गये। उसने राजा का राज्य और उनकी सम्पूर्ण सम्पत्ति को अपने अधिकार में ले लिया। इतने पर भी

उस पराक्रमी राक्षस भीम का क्रोध शान्त नहीं हुआ, तो उसने धर्म प्रेमी और शिव के अनन्य भक्त राजा सुदक्षिण को कैद कर लिया। सुदक्षिण के पैरों में बेड़ी डालकर उन्हें एकान्त स्थान में निरुद्ध (बन्द) कर दिया। उस एकान्त स्थान का लाभ उठाते हुए शिव भक्त राजा सुदक्षिण ने भगवान शिव की उत्तम पार्थिव मूर्ति बनाकर उनका भजन-पूजन प्रारम्भ कर दिया।

गंगा जी को भी प्रसन्न करने के लिए राजा ने ढेर सारी स्तुति की और विवशता के कारण मानसिक स्नान किया। उसके बाद उन्होंने शास्त्र विधि से पार्थिव लिंग में भगवान शिव की अर्चना की। उसके बाद वे विधिपूर्वक भगवान शिव का ध्यान करते हुए पंचाक्षर मन्त्र अर्थात 'ॐ नमः शिवाय' का जप करने लगे। राजा सुदक्षिण इसी दिनचर्या को अपनाकर रात-दिन शिव जी की भक्ति में लगे रहते थे। उनकी साध्वी धर्मपत्नी रानी दक्षिणा भी राजा का अनुकरण करती हुई श्रद्धा-भक्ति पूर्वक पार्थिव पूजन में जुट गयीं। वे पति-पत्नी अकारण करुणावरुणालय भगवान शिव को प्रसन्न करने हेतु अनन्य भाव से उनकी भक्ति में लीन रहते थे। राक्षस भीम ब्रह्मा जी के वरदान के कारण अत्यन्त अहंकार में डूब गया। अभिमान में मोहित होकर वह यज्ञों का विध्वंस करने लगा और तमाम धार्मिक कृत्यों में बाधा डालने लगा। उसने जनता में ऐसी घोषणा करवा दी कि संसार का सब कुछ उसे ही मानें और समझें। इस प्रकार उस दुष्ट राक्षस ने एक विशाल सेना इकट्ठी करके सम्पूर्ण पृथ्वी को अपने अधिकार में कर लिया। उसके बाद उसके दुराचारों की सीमा न रही।

राक्षस भीम के अत्याचार से पीड़ित सभी देवता और ऋषिगण महाकोशी नदी के किनारे जाकर भगवान शिव की आराधना और स्तुति करने लगे। उनकी सामूहिक स्तुति और प्रार्थना से भगवान शंकर ने देवताओं से कहा–'देवगण तथा महर्षियों! मैं आप लोगों पर अत्यन्त प्रसन्न हूँ, बोलिए, आप लोगों का कौन-सा अभीष्ट कार्य (प्रियकार्य) सिद्ध करूँ?' देवताओं ने देवाधिदेव से कहा कि 'आप अन्तर्यामी हैं, इसलिए सबके मन की बात जानते हैं। आपसे कोई भी रहस्य छिपा नहीं रह सकता है।' देवताओं ने

आगे कहा– 'महेश्वर! राक्षस कुम्भकर्ण से उत्पन्न कर्कटी का महाबलशाली पुत्र राक्षस भीम, ब्रह्मा जी से वर प्राप्त कर अत्यन्त शक्तिशाली और अभिमान में आ गया है तथा देवताओं को अनवरत कष्ट पहुँचा रहा है। भगवान! बिना देरी किये आप उस दु:खदायी राक्षस का शीघ्र ही नाश कर डालिए। हम सभी देवगण उससे अत्यन्त क्षुब्ध होकर आपकी शरण में आये हैं।'

भगवान शिव ने उन देवताओं को आश्वस्त करते हुए बताया कि कामरूप देश के राजा सुदक्षिण उनके श्रेष्ठ भक्त हैं। आप लोग उनके पास मेरा एक सन्देश सुना दो। उसके बाद आप लोगों का सारा अभीष्ट कार्य पूरा हो जाएगा। उनसे बोलना – कामरूप के अधिपति महाराज सुदक्षिण! तुम शिव के परम भक्त हो। इसलिए तुम उनका प्रेमपूर्वक भजन करो। दुष्ट राक्षस भीम ब्रह्मा जी का वर प्राप्त कर ही अभिमानी बन गया है और इसीलिए वह तुम्हारा अपमान कर रहा है। अपने भक्त के कष्ट को नहीं सहन करने वाले भगवान शिव शीघ्र ही उस दुष्ट राक्षस का नाश करने वाले हैं। इस वाणी में किसी भी प्रकार का सन्देह नहीं है।' उसके बाद भगवान शंकर की वाणी से अत्यन्त प्रसन्न उन देवताओं ने महाराजा सुदक्षिण के पास पहुँचकर सारी घटना बताई। राजा को शिव का कल्याणकारक सन्देश देने से देवताओं और ऋषियों का हित करने वाले भगवान शंकर अपने गणों के साथ उस राजा के निकट जाकर गोपनीय रूप में वहीं ठहर गये। राजा सुदक्षिण विधिपूर्वक पार्थिवपूजन करके भगवान शिव के ध्यान में लीन हो गये।

किसी व्यक्ति ने जाकर राक्षस से बताया कि राजा पार्थिव पूजन करके तुम्हारे लिए अनुष्ठान कर रहे हैं। समाचार पाते ही राक्षस क्रोध से आग – बबूला हो उठा। वह राजा का वध करने हेतु हाथ में नंगी तलवार लेकर चल पड़ा। ध्यान में मग्न राजा को देखकर उसका चेहरा क्रोध से तमतमा रहा था। उसने पूजन सामग्री, पार्थिव शिवलिंग, वातावरण को देखकर तथा उसके प्रयोजन और स्वरूप को समझकर मान लिया कि राजा उसके अनिष्ट के लिए ही कुछ कर रहा है। उस महाक्रोधी राक्षस ने ऐसा

विचार किया कि इन सब पूजन सामग्रियों सहित इस नरेश को भी मैं शीघ्र ही नष्ट कर देता हूँ। उसने राजा को डाँट-फटकार लगाते हुए पूछा कि 'तुम यह क्या कर रहे हो?' राजा भगवान शंकर के समर्पित भक्त थे। इसलिए उन्होंने निर्भयतापूर्वक कहा कि 'मैं चराचर जगत के स्वामी भगवान शिव की पूजा कर रहा हूँ।'

यह सुनकर मद में मतवाले उस राक्षस ने भगवान शिव के प्रति बहुत से दुर्वचन बोले और उनका अपमान किया तथा पार्थिव लिंग पर तलवार का प्रहार किया। उसकी तलवार लिंग को छू नहीं पायी, तभी भगवान रुद्र (शिव) तत्काल प्रकट हो गये। उन्होंने कहा–'देखो, मैं भीमेश्वर शिव अपने भक्त की रक्षा के लिए प्रकट हुआ हूँ। इसलिए राक्षस! अब तू मेरे बल और पराक्रम को देख।' इस प्रकार बोलते हुए भगवान शिव ने अपने पिनाक से उसकी तलवार के टुकड़े-टुकड़े कर दिया। उसके बाद उस राक्षस ने शिव जी पर अपना त्रिशूल चला दिया, किन्तु उन्होंने उसके भी अनेक टुकड़े कर डाले। तदनंन्तर उस राक्षस ने शिव जी के साथ घोर युद्ध किया, जिससे सारा जगत क्षुब्ध हो उठा। उस स्थिति में मुनि नारद वहाँ पहुँच गये और उन्होंने भगवान शंकर से प्रार्थना की 'महेश्वर! संसार को भ्रमित करने वाले मेरे नाथ! अब आप क्षमा करें। सामान्य तिनके को काटने हेतु कुल्हाड़ी चलाने की क्या आवश्यकता है? अब तो इसका संहार शीघ्र कर डालिए–

क्षम्यतां क्षम्यतां नाथत्वया विभ्रमकारक।
तृणे कश्च कुठारे वै हन्यतां शीघ्रमेव हि।।

इति संप्रार्थितः शम्भुः सर्वान रक्षोगणान्प्रभुः।
हुंकारेणैव चास्त्रेण भस्मसात्कृतवांस्तदा।।

इस प्रकार जब नारद जी ने भगवान शिव की प्रार्थना की, उन्होंने अपनी हुँकार मात्र से भीम सहित समस्त राक्षसों को भस्म कर डाला। उन राक्षसों

को शंकर जी के द्वारा जला दिये जाने के बाद समस्त देवताओं और ऋषियों ने राहत की साँस ली तथा लोक में शान्ति की स्थापना हो सकी। ऋषियों ने देवाधिदेव भगवान शिव की विशेष स्तुति और प्रार्थना की। उन्होंने कहा–'भूतभावन शिव! यह क्षेत्र बहुत ही निन्दित माना जाता है, इसलिए लोक कल्याण की भावना से आप सदा के लिए यहीं निवास करें। प्राय: ऐसा देखा गया है कि जो व्यक्ति यहाँ आता है, उसे कष्ट ही मिलता है, किन्तु आपके दर्शन करने से प्रत्येक आने वाले का कल्याण होगा। भगवान! आपका यह ज्योतिर्लिंग सर्वथा पूजनीय तथा सभी प्रकार के संकटों को टालने वाला है। आप यहाँ भीमशंकर के नाम से प्रसिद्ध होंगे और सबके मनोरथों को सिद्ध करेंगे। इस प्रकार देवताओं तथा ऋषियों की प्रार्थना पर प्रसन्न भक्तवत्सल शिव ने उनका आग्रह स्वीकार कर लिया और प्रसन्नतापूर्वक वहीं स्थित हो गये। इस प्रकार की कथा का प्रामाणिक उल्लेख श्री शिव पुराण में विस्तार से किया गया है

अयं वै कुत्सितो देश अयोध्यालोकदु:खद:।
भवन्तं च तदा दृष्ट्वा कल्याणं सम्भाविष्यति।।

भीमशंकरनामा त्वं भविता सर्वसाधक:।
एतल्लिंग सदा पूज्यं सर्वापद्विनिवारकम्।।

इत्येवं प्रार्थित: शम्भुलोकानां हितकारक:।
तत्रैवास्थितवान्प्रीत्या स्वतन्त्रो भक्तवत्सल:।।

## जनश्रुतियाँ

जनश्रुतियों तथा महाराष्ट्र में बहने वाली भीमा नदी को आधार बनाकर कुछ लोग भीमशंकर ज्योतिर्लिंग का स्थान मुम्बई से पूर्व और पूना से उत्तर भीमा नदी के किनारे मानते हैं। वहाँ पर भगवान शिव सह्याद्रि पर्वत पर अवस्थित हैं। द्वाद्वश ज्योतिर्लिंग स्तोत्र में 'डाकिन्यां भीमशंकरम्' ऐसा

लिखा है, किन्तु इस 'डाकिनी' स्थान का कहीं अता-पता नहीं है। हो सकता है, प्राचीनकाल में वहाँ कोई बस्ती रही हो, जो कालान्तर में नष्ट हो गई हो। सह्याद्रि पर्वत जिस पर भगवान भीमशंकर विराजमान हैं, उसी से भीमा नदी निकल कर प्रवाहित होती है। इस लिंगमूर्ति से किंचित जल रिसता हुआ गिरता है। इसके समीप ही जल के दो कुण्ड भी हैं और आस-पास लोगों की बस्ती है। उन निवासियों के अनुसार भगवान शंकर ने त्रिपुरासुर का वध करने के बाद उसी स्थान पर विश्राम किया था।

उस समय अवध के निवासी किसी सूर्यवंशी राजा ने उस पर्वत पर जाकर कठोर तपस्या की थी। उसकी भक्ति और तपस्या से भगवान शंकर अतीव प्रसन्न हुए थे। बताते हैं कि उस राजा का भी नाम 'भीम' था। प्रसन्न होकर भगवान शिव ने उन्हें दर्शन दिया था, उसी समय से यह ज्योतिर्लिंग भीमशंकर के नाम से प्रसिद्ध हुआ। ऐसा प्रतीत होता है कि अवध नरेश राजा भीम और भीमा नदी के कारण सह्याद्रि पर्वत का वह भाग और शिवलिंग श्री भीमशंकर ज्योतिर्लिंग के नाम से विख्यात हुआ।

<u>पहुँचने के साधन</u>

श्री भीमशंकर स्थान मुम्बई से पूना जाने वाले रेलमार्ग पर कल्याण जंकशन से लगभग 30 किलोमीटर की दूरी पर नेराल रेलवे स्टेशन है और यहाँ से पूरब दिशा में लगभग 25 किलोमीटर पर अवस्थित है। यहाँ से बस, टैक्सी आदि का साधन उपलब्ध होता है। तलेगाँव रेलवे स्टेशन से भीमशंकर की दूरी लगभग 36 किलोमीटर है। यहाँ से भी मोटरमार्ग की अच्छी सुविधा है।

यद्यपि ज्योतिर्लिंग के स्थान के सम्बन्ध में क्षेत्र विशेष के आधार पर मतान्तर दिखाता है, किन्तु आध्यात्मिक दृष्टि से इन शिवलिंगों का महत्त्व कम नहीं होता है। ये सभी सिद्ध स्थान हैं, जहाँ दर्शन-पूजन करने से भगवान शिव प्रसन्न होकर अपने भक्तों की मनोकामना को पूर्ण करते हैं।

# विश्वनाथ

विश्वनाथ ज्योतिर्लिंग उत्तरप्रदेश के वाराणसी तीर्थ में स्थित है। वाराणसी को बनारस तथा काशी के नाम से भी जाना जाता है, यह उत्तर प्रदेश राज्य का प्रमुख शहर है । पवित्र गंगा नदी के किनारे स्थित इस शहर का हिंदुओं के लिए अत्यंत धार्मिक महत्त्व है । वाराणसी में भगवान शिवजी का विश्वनाथ मंदिर है जहां विश्वनाथ ज्योतिर्लिंग स्थापित है । ऐसा कहा जाता है कि इस मंदिर का अनेक बार निर्माण हुआ। नवीनतम संरचना जो आज यहां स्थापित है उसका निर्माण 18 वीं शताब्दीमें हुआ था।

सहस्त्रों धार्मिक यात्री यहां पवित्र ज्योतिर्लिंग के दर्शन हेतु एवं अभिषेक के लिए यहां एकत्रित होते हैं, गंगा नदी के जल से शिवजी को अभिषेक किया जाता है । इसके धार्मिक महत्त्व के अतिरिक्त यह मंदिर वास्तुकला की दृष्टि से भी अनुपम है । इसका भव्य प्रवेशद्वार दर्शनीय है । इंदौरकी रानी

अहिल्या बाई होलकर को स्वप्नमें भगवान शिवजी के दर्शन हुए । उन्होंने 1780 में यह मंदिर निर्मित कराया । यह मंदिर दशाश्वमेध घाट और गोदुलिया के बीच मणिकर्णिका घाट के दक्षिण और पश्चिम तक नदी की उत्तर दिशा में वाराणसी के  मध्य में स्थित है । यह पूरा क्षेत्र दर्शन योग्य है जहां अनेक मठ दिखाई देते हैं । विश्वनाथ गली तक पहुंचते हुए यह विश्वनाथ मंदिर "सभी के भगवान" माने जाते हैं शिखर पर स्वर्ण लेपन होनेके कारण इसे स्वर्ण मंदिर भी कहते हैं । परिसरके भीतर, एक अत्यंत अनोखे प्रकार के द्वार से पहुंचा जाता है

यह भारत का सबसे महत्त्वपूर्ण शिवलिंग है । यह चिकने काले पत्थरसे बना हुआ है । इसे ठोस चांदी के आधारमें रखा गया है । यहां भक्तजन आकर संकल्प करते हैं । पंचतीर्थ यात्रा आरंभ करने से पहले अपने मन की भावना यहां व्यक्त करते हैं । वाराणसी में घाटों और गंगा नदी के अतिरिक्त मंदिर में स्थापित शिवलिंग वाराणसी का धार्मिक आकर्षण बना हुआ है।

काशी विश्वनाथ मंदिर का हिंदू धर्म में एक विशिष्ठ स्थान है। ऐसा माना जाता है कि एक बार इस मंदिर के दर्शन करने और पवित्र गंगा में स्नान कर लेने से मोक्ष की प्राप्ति होती है। इस मंदिर में दर्शन करने के लिए आदि शंकराचार्य, सन्त एकनाथ रामकृष्ण परमहंस, स्वामी विवेकानंद, महर्षि दयानंद, गोस्वामी तुलसीदास सभी का आगमन हुआ हैं। यहीं पर सन्त एकनाथजीने वारकरी सम्प्रदाय का महान ग्रन्थ श्रीएकनाथी भागवत लिखकर पुरा किया और काशिनरेश तथा विद्वतजनो द्वारा उस ग्रन्थ की हाथी पर शोभायात्रा खुब धुमधामसे निकाली गयी । श्री विश्वेश्वर ज्योतिर्लिंग उत्तर प्रदेश के वाराणसी जनपद के काशी नगर में अवस्थित है। कहते हैं, काशी तीनों लोकों में न्यारी नगरी है, जो भगवान शिव के त्रिशूल पर विराजती है। इसे आनन्दवन, आनन्दकानन, अविमुक्त क्षेत्र तथा काशी आदि अनेक नामों से स्मरण किया गया है। काशी साक्षात सर्वतीर्थमयी, सर्वसन्तापहरिणी तथा मुक्तिदायिनी नगरी है। निराकार महेश्वर ही यहाँ भोलानाथ श्री विश्वनाथ के रूप में साक्षात अवस्थित हैं।

इस काशी क्षेत्र में स्थित श्री दशाश्वमेध, श्री लोलार्क, श्री बिन्दुमाधव, श्री केशव और श्री मणिकर्णिक ये पाँच प्रमुख तीर्थ हैं, जिनके कारण इसे 'अविमुक्त क्षेत्र' कहा जाता है। काशी के उत्तर में ओंकारखण्ड, दक्षिण में केदारखण्ड और मध्य में विश्वेश्वरखण्ड में ही बाबा विश्वनाथ प्रसिद्ध है। ऐसा सुना जाता है कि मन्दिर की पुन: स्थापना आदि जगत गुरु शंकरचार्य जी ने अपने हाथों से की थी। श्री विश्वनाथ मन्दिर को मुग़ल बादशाह औरंगज़ेब ने नष्ट करके उस स्थान पर मस्जिद बनवा दी थी, जो आज भी विद्यमान है। इस मस्जिद के परिसर को ही 'ज्ञानवाणी' कहा जाता है। प्राचीन शिवलिंग आज भी 'ज्ञानवाणी' कहा जाता है।

वर्तमान मंदिर का निर्माण महारानी अहिल्या बाई होल्कर द्वारा सन 1780 में करवाया गया था। बाद में महाराजा रणजीत सिंह द्वारा 1853 में 1000 किलो शुद्ध सोने द्वारा मढ़वाया गया था। काशी में अनेक विशिष्ट तीर्थ हैं, जिनके विषय में लिखा है–

विश्वेशं माधवं ढुण्ढिं दण्डपाणिं च भैरवम्।
वन्दे काशीं गुहां गंगा भवानीं मणिकर्णिकाम्।।

अर्थात 'विश्वेश्वर ज्योतिर्लिंग बिन्दुमाधव, ढुण्ढिराज गणेश, दण्डपाणि कालभैरव, गुहा गंगा (उत्तरवाहिनी गंगा), माता अन्नपूर्णा तथा मणिकर्णिक आदि मुख्य तीर्थ हैं।

# वैद्यनाथ

वैद्यनाथ मन्दिर, देवघर द्वादश ज्योतिर्लिंग में से एक है जो भारत के राज्य झारखंड में अतिप्रसिद्ध देवघर नामक स्थान पर अवस्थित है। पवित्र तीर्थ होने के कारण लोग इसे वैद्यनाथ धाम भी कहते हैं। जहाँ पर यह मन्दिर स्थित है उस स्थान को "देवघर" अर्थात देवताओं का घर कहते हैं। बैद्यनाथ ज्योतिर्लिंग स्थित होने के कारण इस स्थान को देवघर नाम मिला है। यह ज्योतिर्लिंग एक सिद्धपीठ है। कहा जाता है कि यहाँ पर आने वालों की सारी मनोकामनाएँ पूर्ण होती हैं। इस कारण इस लिंग को "मनोकामना लिंग" भी कहा जाता हैं।

<u>रावणेश्वर की कथा</u>

रावण शिव भक्त था, वह बार-बार कैलाश जाकर शिवजी की पूजा करता था।एक बार उसने सोचा क्यों न शंकर भगवान को लंका ले आऊ, ताकि बार-बार लंका न जाना पड़े। इसी प्रयोजन से उसने कैलाश पर जाकर

कठोर तपस्या की। सर्दी-गर्मी-वर्षा में अटल रह कर कठोर ताप किया, इस पर भी शिवजी प्रसन्न नहीं हुए तो अपने सिर काट-काटकर शिवलिंग पर चढ़ाने शुरू कर दिये। एक-एक करके नौ सिर चढ़ाने के बाद दसवाँ सिर भी काटने को ही था कि शिवजी प्रसन्न होकर प्रकट हो गये। उन्होंने उसके दसों सिर ज्यों-के-त्यों कर दिये और उससे वरदान माँगने को कहा। रावण ने शिवजी को लंका ले जाने का आग्रह किया। शिवजी ने एक लिंग उत्पन्न करके कहा इसे तुम लंका ले जाओ, मगर ध्यान रहे रास्ते में यह भूमि को न छूने पाए,अन्यथा वापस नहीं उठेगा। यह कहकर शंकर भगवान उस लिंग में समाहित हो गए। रावण इच्छित फल पा कर खुश हुआ व लिंग को उठाने चला। उसी समय आकाशवाणी हुई कि रावण इसे उठाने से पहले आचमन कर लेना चाहिए। रावण ने भी यह उचित समझा व आचमन करके शिव लिंग उठाकर लंका की और चला।

रास्ते में लंका की और चलता रहा। जब वह आगे बढ़ा तो उसे लघु शंका की शिकायत हुई। मगर शिवजी की बात ध्यान में आने पर वह चलता रहा, मगर जब असहनीय हो गया तो उसने इधर-उधर देखा तो एक ब्राह्मण नजर आया।(ब्राह्मण के वेश में विष्णु भगवान थे। और आचमन कराने की भी देवताओं की चाल थी।) उस लिंग को ब्राह्मण को सोंपकर रावण लघुशंका करने चला गया वहां उसे काफी समय लगा। उधर उस ब्राह्मण ने उस लिंग की स्थापना कर दी,यह वही स्थान था, जहाँ सती का ह्रदय गिरा था,यानि 52 में से एक शक्तिपीठ था। रावण वापस आया तो शिवलिंग को धरती पर पाया। उसने लाख यत्न किया उसे उठाने का, मगर शिवलिंग नहीं हिला।अंत में रावण ने क्रोध में भरकर सोचा अगर मेरे साथ लंका नहीं जायोगे तो यहाँ भी नहीं रहोगे,उसने जोर लगाकर उसे पाताल में भेजना चाहा मगर लिंग थोडा टेड़ा होकर रह गया।

उसी समय उस लिंग पर शंकर भगवान प्रगटे और रावण से बोले, रावण इस जगह मैं तुम्हारे कारण हूँ। अतः जो भी मेरी पूजा करेगा वह तुम्हारी भी पूजा करेगा। मेरे साथ तुम्हारा भी नाम रहेगा। इस प्रकार रावण संतुष्ट हो गया। वह वहां से गंगाजी तक गया व जल भरकर कांवर लाया व शिव

लिंग पर चढ़ाया। उस समय सावन का महिना था। अतः कांवर प्रथा की शुरुआत यहीं से हुई बताते हैं। रावण ने वहीँ पर चंद्रकूप का निर्माण किया व सब नदियों का पवित्र जल लाकर उसमें डाला व शिवजी का जलाभिषेक किया। शिवलिंग की पूजा करके रावण लंका चला गया। इस प्रकार रावणेश्वर धाम बना। अब यह वैद्यनाथ कैसे बना इसकी अलग कहानी है। उसी जंगल में बैजू नाम का एक ग्वाला गायें चराता था। उसने देखा कि एक गाय एक स्थान पर जाकर अपना पूरा दूध निकाल देती है। उसी रात उसे सपने में शंकर भगवान दिखाई दिए व उसे उस लिंग की पूजा करने की प्रेरणा मिली। वह रोजाना उस लिंग की पूजा करने लगा।

इधर ब्रह्मा, विष्णु आदि देवताओं ने आकर उस शिवलिंग की पूजा की। शिवजी का दर्शन होते ही सभी देवी देवताओं ने शिवलिंग की वहीं उसी स्थान पर प्रतिस्थापना कर दी और शिव-स्तुति करते हुए वापस स्वर्ग को चले गये। जनश्रुति व लोक-मान्यता के अनुसार यह वैद्यनाथ-ज्योतिर्लिंग मनोवांछित फल देने वाला है।श्री शिव महापुराण के उपर्युक्त द्वादश ज्योतिर्लिंग की गणना के क्रम मे श्री वैद्यनाथ को नौवाँ ज्योतिर्लिंग बताया गया है। स्वर्ग के शिल्पका ने वहां एक भव्य मंदिर का निर्माण किया।

एक बार देवताओं के चिकित्सक अश्विनी कुमार बीमार पड़ गए,उनका कई जगह इलाज कराया गया मगर वे ठीक नहीं हुए। आखिर में उनको यहाँ लाया गया तो वे एकदम ठीक हो गए,इस प्रकार वेदों के वैद अर्थात वैधनाथ भगवान कहलाये।

इधर ब्रह्मा, विष्णु आदि देवताओं ने आकर उस शिवलिंग की पूजा की। शिवजी का दर्शन होते ही सभी देवी देवताओं ने शिवलिंग की वहीं उसी स्थान पर प्रतिस्थापना कर दी और शिव-स्तुति करते हुए वापस स्वर्ग को चले गये। जनश्रुति व लोक-मान्यता के अनुसार यह वैद्यनाथ-ज्योतिर्लिंग मनोवांछित फल देने वाला है।श्री शिव महापुराण के उपर्युक्त द्वादश ज्योतिर्लिंग की गणना के क्रम मे श्री वैद्यनाथ को नौवाँ ज्योतिर्लिंग बताया गया है।

सस्थान का संकेत करते हुए लिखा गया है कि 'चिताभूमौ प्रतिष्ठितः'। इसके अतिरिक्त अन्य स्थानों पर भी 'वैद्यनाथं चिताभूमौ' ऐसा लिखा गया है। 'चिताभूमौ' शब्द का विश्लेषण करने पर परली के वैद्यनाथ द्वादश ज्योतिर्लिंगों में नहीं आते हैं, इसलिए उन्हें वास्तविक वैद्यनाथ ज्योतिर्लिंग मानना उचित नहीं है। सन्थाल परगना जनपद के जसीडीह रेलवे स्टेशन के समीप देवघर पर स्थित स्थान को 'चिताभूमि' कहा गया है। जिस समय भगवान शंकर सती के शव को अपने कन्धे पर रखकर इधर-उधर उन्मत्त की तरह घूम रहे थे, उसी समय इस स्थान पर सती का हृत्पिण्ड अर्थात हृदय भाग गलकर गिर गया था। भगवान शंकर ने सती के उस हृत्पिण्ड का दाह-संस्कार उक्त स्थान पर किया था, जिसके कारण इसका नाम 'चिताभूमि' पड़ गया।

यह वैद्यनाथ ज्योतिर्लिंग मनुष्य को उसकी इच्छा के अनुकूल फल देने वाला है। इस वैद्यनाथ धाम में मन्दिर से थोड़ी ही दूरी पर एक विशाल सरोवर है, जिस पर पक्के घाट बने हुए हैं। भक्तगण इस सरोवर में स्नान करते हैं। यहाँ तीर्थपुरोहितों (पण्डों) के हज़ारों घाट हैं, जिनकी आजीविका मन्दिर से ही चलती है। परम्परा के अनुसार पण्डा लोग एक गहरे कुएँ से जल भरकर ज्योतिर्लिंग को स्नान कराते हैं। अभिषेक के लिए सैकड़ों घड़े जल निकाला जाता हैं। उनकी पूजा काफ़ी लम्बी चलती है। उसके बाद ही आम जनता को दर्शन-पूजन करने का अवसर प्राप्त होता है। यह ज्योतिर्लिंग रावण के द्वारा दबाये जाने के कारण भूमि में दबा है तथा उसके ऊपरी सिरे में कुछ गड्ढा सा बन गया है। फिर भी इस शिवलिंग मूर्ति की ऊँचाई लगभग ग्यारह अंगुल है। सावन के महीने में यहाँ मेला लगता है और भक्तगण दूर-दूर से काँवर में जल लेकर बाबा वैद्यनाथ धाम (देवघर) आते हैं। वैद्यनाथ धाम में अनेक रोगों से छुटकारा पाने हेतु भी बाबा का दर्शन करने श्रद्धालु आते हैं। ऐसी प्रसिद्धि है कि श्री वैद्यनाथ ज्योतिर्लिंग की लगातार आरती-दर्शन करने से लोगों को रोगों से मुक्ति मिलती है।

# त्र्यम्बकेश्वर

श्री त्र्यंबक ज्योतिर्लिंग महाराष्ट्र प्रान्त के नासिक जनपद में नासिक शहर से तीस किलोमीटर पश्चिम में अवस्थित है। यहाँ समीप में ही ब्रह्मगिरि नामक पर्वत से गोदावरी नदी निकलती है। जिस प्रकार उत्तर भारत में प्रवाहित होने वाली पवित्र नदी गंगा का विशेष आध्यात्मिक महत्त्व है, उसी प्रकार दक्षिण में प्रवाहित होने वाली इस पवित्र नदी गोदावरी का विशेष महत्त्व है। जहाँ उत्तरभारत की गंगा को 'भागीरथी' कहा जाता हैं, वहीं इस गोदावरी नदी को 'गौतमी गंगा' कहकर पुकारा जाता है। भागीरथी राजा भगीरथ की तपस्या का परिणाम है, तो गोदावरी ऋषि गौतम की तपस्या का साक्षात फल है।

त्र्यंबकेश्वर मंदिर और गाँव ब्रह्मगिरि नामक पहाड़ी की तलझटी में स्थित है। इस गिरि को शिव का साक्षात रूप माना जाता है। इसी पर्वत पर पवित्र गोदावरी नदी का उद्गमस्थल है। गोदावरी के उद्गम स्थल के

समीप ही श्री त्र्यम्बकेश्वर शिव अवस्थित हैं, जिनकी महिमा का बखान पुराणों में किया गया है। ऋषि गौतम और पवित्र नदी गोदावरी की प्रार्थना पर ही भगवान शिव ने इस स्थान पर अपने वास की स्वीकृति दी थी। वही भगवान शिव 'त्र्यम्बकेश्वर' नाम से इस जगत में विख्यात हुए। यहाँ स्थित ज्योतिर्लिंग का प्रत्यक्ष दर्शन स्त्रियों के लिए निषिद्ध है, अत: वे केवल भगवान के मुकुट का दर्शन करती हैं। त्र्यम्बकेश्वर-मन्दिर में सर्वसामान्य लोगों का भी प्रवेश न होकर, जो द्विज (ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य) हैं तथा भजन-पूजन करते हैं और पवित्रता रखते हैं, वे ही लोग मन्दिर के अन्दर प्रवेश कर पाते हैं। इनसे अतिरिक्त लोगों को बाहर से ही मन्दिर का दर्शन करना पड़ता है।

यहाँ मन्दिर के भीतर एक गड्ढे में तीन छोटे-छोटे लिंग हैं, जो ब्रह्मा, विष्णु और शिव इन तीनों देवों के प्रतीक माने जाते हैं। ब्रह्मगिरी से निकलने वाली गोदावरी की जलधारा इन त्रिमूर्तियों पर अनवरत रूप से पड़ती रहती है। ब्रह्मगिरि पर्वत के ऊपर जाने के लिए सात सौ सीढ़ियों का निर्माण कराया गया है। ऊपरी पहाड़ी पर 'रामकुण्ड' और 'लक्ष्मणकुण्ड' नामक दो कुण्ड भी स्थित हैं। पर्वत की चोटी पर पहुँचने पर गोमुखी से निकलती हुई भगवान गौतमी (गोदावरी) का दर्शन प्राप्त होता है।

गाँव के अंदर कुछ दूर पैदल चलने के बाद मंदिर का मुख्य द्वार नजर आने लगता है। त्र्यंबकेश्वर मंदिर की भव्य इमारत सिंधु-आर्य शैली का उत्कृष्ट नमूना है। मंदिर के अंदर गर्भगृह में प्रवेश करने के बाद शिवलिंग की केवल आर्घा दिखाई देती है, लिंग नहीं। गौर से देखने पर आर्घा के अंदर एक-एक इंच के तीन लिंग दिखाई देते हैं। इन लिंगों को त्रिदेव-ब्रह्मा-विष्णु और महेश का अवतार माना जाता है। भोर के समय होने वाली पूजा के बाद इस आर्घा पर चाँदी का पंचमुखी मुकुट चढ़ा दिया जाता है।

प्राचीनकाल में त्र्यंबक गौतम ऋषि की तपोभूमि थी। अपने ऊपर लगे गोहत्या के पाप से मुक्ति पाने के लिए गौतम ऋषि ने कठोर तप कर शिव

से गंगा को यहाँ अवतरित करने का वरदान माँगा। फलस्वरूप दक्षिण की गंगा अर्थात गोदावरी नदी का उद्गम हुआ। गोदावरी के उद्गम के साथ ही गौतम ऋषि के अनुनय-विनय के उपरांत शिवजी ने इस मंदिर में विराजमान होना स्वीकार कर लिया। तीन नेत्रों वाले शिवशंभु के यहाँ विराजमान होने के कारण इस जगह को त्र्यंबक (तीन नेत्रों वाले) कहा जाने लगा। उज्जैन और ओंकारेश्वर की ही तरह त्र्यंबकेश्वर महाराज को इस गाँव का राजा माना जाता है, इसलिए हर सोमवार को त्र्यंबकेश्वर के राजा अपनी प्रजा का हाल जानने के लिए नगर भ्रमण के लिए निकलते हैं।

इस प्राचीन मंदिर का पुनर्निर्माण तीसरे पेशवा बालाजी अर्थात नाना साहब पेशवा ने करवाया था। इस मंदिर का जीर्णोद्धार 1755 में शुरू हुआ था और 31 साल के लंबे समय के बाद 1786 में जाकर पूरा हुआ। कहा जाता है कि इस भव्य मंदिर के निर्माण में करीब 16 लाख रुपए खर्च किए गए थे, जो उस समय काफी बड़ी रकम मानी जाती थी।

**ॐ जय गङ्गाधर हर शिव जय गिरिजाधीश**
**शिव जय गौरीनाथ त्वं मां पालय नित्यं**
**त्वं मां पालय शम्भो कृपया जगदीश ॥**
**ॐ हर हर हर महादेव ।।**

# नागेश्वर

नागेश्वर ज्योतिर्लिंग गुजरात प्रांत में द्वारका पुरी से लगभग 17 मील की दूरी पर स्थित है। यह स्थान गोमती द्वारका से बेट द्वारका जाते समय रास्ते में पड़ता है। इस पवित्र ज्योतिर्लिंग के दर्शन की शास्त्रों में बड़ी महिमा बताई गई है। कहा गया है कि जो श्रद्धापूर्वक इसकी उत्पत्ति और माहात्म्य की कथा सुनेगा वह सारे पापों से छुटकारा पाकर समस्त सुखों का भोग करता हुआ अंत में भगवान् शिव के परम पवित्र दिव्य धाम को प्राप्त होगा।

एतद् यः श्रृणुयान्नित्यं नागेशोद्भवमादरात्।
सर्वान् कामानियाद् धीमान् महापातकनाशनम्॥

नागेश्वर ज्योतिर्लिंग के स्थान को लेकर भक्तों में मतैक्य नहीं है। कुछ लोग मानते हैं की यह ज्योतिर्लिंग महाराष्ट्र के हिंगोली जिले में स्थित औंढा नागनाथ नामक जगह पर है, वहीँ अन्य लोगों का मानना है की यह ज्योतिर्लिंग उत्तराखंड राज्य के अल्मोड़ा के समीप जागेश्वर नामक जगह पर स्थित है। इन मतभेदों के बावजूद तथ्य यह है की प्रति वर्ष लाखों की संख्या में भक्त गुजरात में द्वारका के समीप स्थित नागेश्वर ज्योतिर्लिंग मंदिर में दर्शन, पूजन और अभिषेक के लिए आते हैं।

## वर्तमान मंदिर

नागेश्वर के वर्तमान मंदिर का पुनर्निर्माण, सूपर केसेट्स इंडस्ट्री के मालिक स्वर्गीय श्री गुलशन कुमार ने करवाया था। उन्होंने इस जीर्णोद्धार का कार्य 1996 में शुरू करवाया, तथा इस बीच उनकी हत्या हो जाने के कारण उनके परिवार ने इस मंदिर का कार्य पूर्ण करवाया। मंदिर निर्माण में लगभग 1.25 करोड़ की लागत आई जिसे गुलशन कुमार चेरिटेबल ट्रस्ट ने अदा किया।

नागेश्वर ज्योतिर्लिंग के परिसर में भगवान शिव की ध्यान मुद्रा में एक बड़ी ही मनमोहक अति विशाल प्रतिमा है जिसकी वजह से यह मंदिर को दो किलोमीटर की दुरी से ही दिखाई देने लगता है, यह मूर्ति 125 फीट ऊँची तथा 25 फीट चौड़ी है. मुख्य द्वार साधारण लेकिन सुन्दर है। मंदिर में पहले एक सभाग्रह है, जहाँ पूजन सामग्री की छोटी छोटी दुकानें लगी हुई हैं। सभामंड़प के आगे तलघर नुमा गर्भगृह में श्री नागेश्वर ज्योतिर्लिंग स्थापित है।

## गर्भगृह

गर्भगृह सभामंड़प से निचले स्तर पर स्थित है, ज्योतिर्लिंग मध्यम बड़े आकार का है जिसके ऊपर एक चांदी का आवरण चढ़ा रहता है।

ज्योतिर्लिंग पर ही एक चांदी के नाग की आकृति बनी हुई है। ज्योतिर्लिंग के पीछे माता पार्वती की मूर्ति स्थापित है। गर्भगृह में पुरुष भक्त सिर्फ धोती पहन कर ही प्रवेश कर सकते हैं, वह भी तभी जब उन्हें अभिषेक करवाना है।

मंदिर समय सारणी

मंदिर सुबह पांच बजे प्रातः आरती के साथ खुलता है, आम जनता के लिए मंदिर छः बजे सुबह खुलता है। भक्तों के लिए शाम चार बजे श्रृंगार दर्शन होता है तथा उसके बाद गर्भगृह में प्रवेश बंद हो जाता है। शयन आरती शाम सात बजे होती है तथा रात नौ बजे मंदिर बंद हो जाता है। नागेश्वर ज्योतिर्लिंग मंदिर में मंदिर प्रबंधन समिति के द्वारा भक्तों की सुविधा के लिए विभिन्न प्रकार की पूजाएँ सशुल्क सम्पन्न कराई जाती हैं। जिन भक्तों को पूजन अभिषेक करवाना होता है, उन्हें मंदिर के पूजा काउंटर पर शुल्क जमा करवाकर रसीद प्राप्त करनी होती है, तत्पश्चात मंदिर समिति भक्त के साथ एक पुरोहित को अभिषेक के लिए भेजती है जो भक्त को लेकर गर्भगृह में लेकर जाता है तथा शुल्क के अनुसार पूजा करवाता है।

रहने की व्यवस्था तथा परिवहन

नागेश्वर ज्योतिर्लिंग मंदिर ओखा तथा द्वारका के बीचोबीच स्थित है। वीरान जगह पर स्थित होने की वजह से यहाँ ठहरने की कोई व्यवस्था उपलब्ध नहीं है, अतः यात्रियों को द्वारका या ओखा में ही ठहरना होता है।

पौराणिक इतिहास

इस प्रसिद्ध शिवलिंग की स्थापना के सम्बन्ध में इतिहास इस प्रकार है- एक धर्मात्मा, सदाचारी और शिव जी का अनन्य वैश्य भक्त था, जिसका नाम 'सुप्रिय' था। जब वह नौका (नाव) पर सवार होकर समुद्र के जलमार्ग

से कहीं जा रहा था, उस समय 'दारूक' नामक एक भयंकर बलशाली राक्षस ने उस पर आक्रमण कर दिया। राक्षस दारूक ने सभी लोगों सहित सुप्रिय का अपहरण कर लिया और अपनी पुरी में ले जाकर उसे बन्दी बना लिया। चूँकि सुप्रिय शिव जी का अनन्य भक्त था, इसलिए वह हमेशा शिव जी की आराधना में तन्मय रहता था। कारागार में भी उसकी आराधना बन्द नहीं हुई और उसने अपने अन्य साथियों को भी शंकर जी की आराधना के प्रति जागरूक कर दिया। वे सभी शिवभक्त बन गये। कारागार में शिवभक्ति का ही बोल-बाला हो गया। जब इसकी सूचना राक्षस दारूक को मिली, तो वह क्रोध में उबल उठा। उसने देखा कि कारागार में सुप्रिय ध्यान लगाए बैठा है, तो उसे डाँटते हुए बोला– 'अरे वैश्य! तू आँखें बन्द करके मेरे विरुद्ध कौन-सा षड्यन्त्र रच रहा है?' वह ज़ोर-ज़ोर से चिल्लाता हुआ धमका रहा था, इसलिए उस पर कुछ भी प्रभाव न पड़ा। घमंडी राक्षस दारूक ने अपने अनुचरों को आदेश दिया कि सुप्रिय को मार डालो।

अपनी हत्या के भय से भी सुप्रिय डरा नहीं और वह भयहारी, संकटमोचक भगवान शिव को पुकारने में ही लगा रहा। उस समय अपने भक्त की पुकार पर भगवान शिव ने उसे कारागार में ही दर्शन दिया। कारागार में एक ऊँचे स्थान पर चमकीले सिंहासन पर स्थित भगवान शिव ज्योतिर्लिंग के रूप में उसे दिखाई दिये। शंकरजी ने उस समय सुप्रिय वैश्य का अपना एक पाशुपतास्त्र भी दिया और उसके बाद वे अन्तर्धान (लुप्त) हो गये। पाशुपतास्त्र (अस्त्र) प्राप्त करने के बाद सुप्रिय ने उसक बल से समचे राक्षसों का संहार कर डाला और अन्त में वह स्वयं शिवलोक को प्राप्त हुआ। भगवान शिव के निर्देशानुसार ही उस शिवलिंग का नाम 'नागेश्वर ज्योतिर्लिंग' पड़ा। 'नागेश्वर ज्योतिर्लिंग' के दर्शन करने के बाद जो मनुष्य उसकी उत्पत्ति और माहात्म्य सम्बन्धी कथा को सुनता है, वह समस्त पापों से मुक्त हो जाता है तथा सम्पूर्ण भौतिक और आध्यात्मिक सुखों को प्राप्त करता है।

# रामेश्वरम

रामेश्वरम एक पवित्र तीर्थ है। यह तमिलनाडु के रामनाथपुरम जिले में स्थित है। यह तीर्थ हिन्दुओं के चार धामों में से एक है। इसके अलावा यहां स्थापित शिवलिंग द्वादश ज्योतिर्लिंगों में से एक माना जाता है। भारत के उत्तर मे काशी की जो मान्यता है, वही दक्षिण में रामेश्वरम् की है। रामेश्वरम चेन्नई से लगभग सवा चार सौ मील दक्षिण-पूर्व में है। मन्नार की खाड़ी में स्थित द्वीप जहां भगवान् राम का लोक-प्रसिद्ध विशाल मंदिर है। यह हिंद महासागर और बंगाल की खाड़ी से चारों ओर से घिरा हुआ एक सुंदर शंख आकार द्वीप है। बहुत पहले यह द्वीप भारत की मुख्य भूमि के साथ जुड़ा हुआ था, परन्तु बाद में सागर की लहरों ने इस मिलाने वाली कड़ी को काट डाला, जिससे वह चारों ओर पानी से घिरकर टापू बन गया। यहां भगवान राम ने लंका पर चढ़ाई करने से पूर्व एक पत्थरों के सेतु का निर्माण करवाया था, जिसपर चढ़कर वानर सेना लंका पहुंची व वहां

विजय पाई। बाद में राम ने विभीषण के अनुरोध पर धनुषकोटि नामक स्थान पर यह सेतु तोड़ दिया था। आज भी इस 30 मील (48 कि.मी) लंबे आदि-सेतु के अवशेष सागर में दिखाई देते हैं। यहां के मंदिर के तीसरे प्राकार का गलियारा विश्व का सबसे लंबा गलियारा है।

जिस स्थान पर यह टापु मुख्य भूमि से जुड़ा हुआ था, वहां इस समय ढाई मील चौड़ी एक खाड़ी है। शुरू में इस खाड़ी को नावों से पार किया जाता था। बताया जाता है, कि बहुत पहले धनुष्कोटि से मन्नार द्वीप तक पैदल चलकर भी लोग जाते थे। लेकिन 1480 ई में एक चक्रवाती तूफान ने इसे तोड़ दिया। बाद में आज से लगभग चार सौ वर्ष पहले कृष्णप्पनायकन नाम के एक राजा ने उस पर पत्थर का बहुत बड़ा पुल बनवाया। अंग्रेजो के आने के बाद उस पुल की जगह पर रेल का पुल बनाने का विचार हुआ। उस समय तक पुराना पत्थर का पुल लहरों की टक्कर से हिलकर टूट चुका था। एक जर्मन इंजीनियर की मदद से उस टूटे पुल का रेल का एक सुंदर पुल बनवाया गया। इस समय यही पुल रामेश्वरम् को भारत से रेल सेवा द्वारा जोड़ता है। यह पुल पहले बीच में से जहाजों के निकलने के लिए खुला करता था। इस स्थान पर दक्षिण से उत्तर की और हिंद महासागर का पानी बहता दिखाई देता है। उथले सागर एवं संकरे जलडमरूमध्य के कारण समुद्र में लहरे बहुत कम होती है। शांत बहाव को देखकर यात्रियों को ऐसा लगता है, मानो वह किसी बड़ी नदी को पार कर रहे हों।

<u>वास्तु शिल्प</u>

श्री रामेश्वर जी का मन्दिर एक हज़ार फुट लम्बा, छ: सौ पचास फुट चौड़ा तथा एक सौ पच्चीस फुट ऊँचा है। इस मन्दिर में प्रधान रूप से एक हाथ से भी कुछ अधिक ऊँची शिव जी की लिंग मूर्ति स्थापित है। इसके अतिरिक्त भी मन्दिर में बहुत-सी सुन्दर-सुन्दर शिव प्रतिमाएँ हैं। नन्दी जी की भी एक विशाल और बहुत आकर्षक मूर्ति लगायी गई है। भगवान शंकर और पार्वती की चल-प्रतिमाएँ भी हैं, जिनकी शोभायात्रा

वार्षिकोत्सव पर निकाली जाती है। इस अवसर पर सोने और चाँदी के वाहनों पर बैठा कर शिव और पार्वती की सवारी निकलती है। वार्षिकोत्सव पर रामेश्वरम ज्योतिर्लिंग को चाँदी के त्रिपुण्ड और श्वेत उत्तरीय से अलंकृत किया जाता है अर्थात सजाया जाता है, जिससे लिंग की अद्‌भुत शोभा होती है। उत्तराखंड के गंगोत्री से गंगाजल लेकर श्री रामेश्वरम ज्योतिर्लिंग पर चढ़ाने का विशेष महत्त्व बताया गया है। श्री रामेश्वर पहुँचने वाले तीर्थ यात्री के पास यदि गंगाजल उपलब्ध नहीं है, तो वहाँ के पण्डे लोग दक्षिणा लेकर छोटी-छोटी शीशियों में (इत्र की शीशी जैसी) गंगाजल देते हैं।

रामेश्वरम् का मंदिर भारतीय निर्माण-कला और शिल्पकला का एक सुंदर नमूना है। इसका प्रवेश-द्वार चालीस फीट ऊंचा है। प्राकार में और मंदिर के अंदर सैकड़ौ विशाल खंभें है, जो देखने में एक-जैसे लगते है ; परंतु पास जाकर जरा बारीकी से देखा जाय तो मालूम होगा कि हर खंभे पर बेल-बूटे की अलग-अलग कारीगरी है।

रामनाथ की मूर्ति के चारों और परिक्रमा करने के लिए तीन प्राकार बने हुए है। इनमें तीसरा प्राकार सौ साल पहले पूरा हुआ। इस प्राकार की लंबाई चार सौ फुट से अधिक है। दोनों और पांच फुट ऊंचा और करीब आठ फुट चौड़ा चबूतरा बना हुआ है। चबूतरों के एक ओर पत्थर के बड़े-बड़े खंभो की लम्बी कतारे खड़ी है। प्राकार के एक सिरे पर खडे होकर देखने पर ऐसा लगता है मानो सैकड़ों तोरण-द्वार स्वागत करने के लिए बनाए गये है। इन खंभों की अद्‌भुत कारीगरी देखकर विदेशी भी दंग रह जाते है। यहां का गलियारा विश्व का सबसे लंबा गलियारा है।

रामनाथ के मंदिर के चारों और दूर तक कोई पहाड़ नहीं है, जहां से पत्थर आसानी से लाये जा सकें। गंधमादन पर्वत तो नाममात्र का है। यह वास्तव में एक टीला है और उसमें से एक विशाल मंदिर के लिए जरूरी पत्थर नहीं निकल सकते। रामेश्वरम् के मंदिर में जो कई लाख टन के पत्थर लगे है, वे सब बहुत दूर-दूर से नावों में लादकर लाये गये है। रामनाथ जी के

मंदिर के भीतरी भाग में एक तरह का चिकना काला पत्थर लगा है। कहते है, ये सब पत्थर लंका से लाये गये थे।

रामेश्वरम् के विशाल मंदिर को बनवाने और उसकी रक्षा करने में रामनाथपुरम् नामक छोटी रियासत के राजाओं का बड़ा हाथ रहा। अब तो यह रियासत तमिल नाडु राज्य में मिल गई हैं। रामनाथपुरम् के राजभवन में एक पुराना काला पत्थर रखा हुआ है। कहा जाता है, यह पत्थर राम ने केवटराज को राजतिलक के समय उसके चिह्न के रूप में दिया था। रामेश्वरम् की यात्रा करने वाले लोग इस काले पत्थर को देखने के लिए रामनाथपुरम् जाते है। रामनाथपुरम् रामेश्वरम् से लगभग तैंतीस मील दूर है।

<u>इतिहास</u>

कहा जाता है कि इसी स्थान पर श्रीरामचंद्रजी ने लंका के अभियान के पूर्व शिव की अराधना करके उनकी मूर्ति की स्थापना की थी। वास्तव में यह स्थान उत्तर और दक्षिण भारत की संस्कृतियों का संगम है। पुराणों में रामेश्वरम् का नाम गंधमादन है। मन्नार द्वीप उत्तर से दक्षिण तक लगभग ग्यारह और पूर्व से पश्चिम तक लगभग सात मील चैड़ा है। बस्ती के पूर्व समुद्र तट पर लगभग 900 फुट लंबे और 600 फुट चैड़े स्थान पर रामेश्वरम् का मंदिर बना है। इसके चतुर्दिक् परकोटा है जिसकी ऊंचाई 22 फुट है। इसमें तीन ओर एक-एक और पूर्व की ओर दो गोपुर है। पश्चिम का गोपुर सात खना है और लगभग सौ फुट ऊंचा है। अन्य गोपर अर्धनिर्मित अवस्था में है और दीवार से अधिक ऊंचे नहीं है। रामेश्वरम् का मुख्य मंदिर 120 फुट ऊंचा है। तीन प्रवेशद्वारों के भीतर शिव के प्रख्यात द्वादश ज्योतिर्लिंगों में से एक यहां स्थित है। मूर्ति के ऊपर शेषनाग अपने फनों से छाया करते हुए प्रदर्शित हैं। रामेश्वरम् के मंदिर की भव्यता उसके सहस्रों स्तंभों वाले बरामदे के कारण है। यह 4000 फुट लंबा है। लगभग 690 फुट की अव्यवहित दूरी तक इन स्तंभों की लगातार पंक्तियां देखकर जिस भव्य तथा अनोखे दृश्य का आंखो को ज्ञान होता है वह अविस्मरणीय

है। भारतीय वास्तु के विद्वान फ़र्गुसन के मत में रामेश्वरम्-मंदिर की कला में द्रविड़ शैली के सर्वोत्तम सौंदर्य तथा उसके दोषों दोनों ही का समावेश है। उनका कहना है कि तंजौर का मंदिर यद्यपि रामेश्वरम् मंदिर की अपेक्षा विशालता तथा सूक्ष्म तक्षण की दृष्टि से उत्तमता से उसका दशमांश भी नहीं है किंतु संपूर्ण रूप से देखने पर उससे अधिक प्रभावशाली जान पड़ता है। रामेश्वरम् के निकट लक्ष्मणतीर्थ, रामतीर्थ, रामझरोखा (जहां श्रीराम के चरणचिह्न की पूजा होती है), सुग्रीव आदि उल्लेखनीय स्थान है। रामेश्वरम् से चार मील पर मंगलातीर्थ और इसके निकट बिलुनी तीर्थ हैं। रामेश्वरम् से थोड़ी ही दूर पर जटा तीर्थ नामक कुंड है जहां किंदवती के अनुसार रामचन्द्र जी ने लंका युद्ध के पश्चात् अपने केशों का प्रक्षालन किया था। रामेश्वरम् का शायद रामपर्वत के नाम से महाभारत में उल्लेख है।

## ज्योतिर्लिंग की स्थापना

सेतुबन्ध-रामेश्वरम तीर्थ व ज्योतिर्लिंग के आविर्भाव के सम्बन्ध में इस प्रकार बताया जाता है–मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान राम ने स्वयं अपने हाथों से श्री रामेश्वर ज्योतिर्लिंग की स्थापना की थी। ऐसा बताया जाता है कि श्रीराम ने जब रावण के वध हेतु लंका पर चढ़ाई की थी, तो यहाँ पहुँचने पर विजय श्री की प्राप्ति हेतु उन्होंने समुद्र के किनारे बालुका (रेत) का शिवलिंग बनाकर उसकी पूजा की थी। ऐसा भी बताया जाता है कि रामेश्वरम में पहुँचकर भगवान श्रीराम जल पी रहे थे। उसी समय आकाशवाणी सुनायी पड़ी– 'तुम मेरी पूजा किये बिना ही जल पी रहे हो?' तब श्रीराम ने लंका पर विजय प्राप्ति के लिए आशीर्वाद प्राप्त किया। श्रीराम द्वारा प्रार्थना किये जाने पर लोक कल्याण की भावना से ज्योतिर्लिंग के रूप में सदा के लिए वहाँ निवास करना भगवान शंकर ने स्वीकार कर लिया। श्रीराम ने विधि-विधान से शिवलिंग की स्थापना की और उनकी पूजा करने के बाद शिव का यशोगान किया।

रामेश्वरम् के विख्यात मंदिर की स्थापना के बारें में यह रोचक कहानी

कही जाती है। सीताजी को छुड़ाने के लिए राम ने लंका पर चढ़ाई की थी। उन्होने लड़ाई के बिना सीताजी को छुड़वाने का बहुत प्रयत्न किया, पर जब राम को सफलता न मिली तो विवश होकर उन्होने युद्ध किया। इस युद्ध में रावण और उसके सब साथी राक्षस मारे गये। रावण भी मारा गया; और अन्ततः सीताजी को मुक्त कराकर श्रीराम वापस लौटे। इस युद्ध हेतु राम को वानर सेना सहित सागर पार करना था, जो अत्यधिक कठिन कार्य था।

रावण भी साधारण राक्षस नहीं था। वह पुलस्त्य महर्षि का नाती था। चारों वेदों का जाननेवाला था और था शिवजी का बड़ा भक्त। इस कारण राम को उसे मारने के बाद बड़ा खेद हुआ । ब्रह्मा-हत्या का पाप उन्हें लग गया। इस पाप को धोने के लिए उन्होने रामेश्वरम् में शिवलिंग की स्थापना करने का निश्चय किया। यह निश्चय करने के बाद श्रीराम ने हनुमान को आज्ञा दी कि काशी जाकर वहां से एक शिवलिंग ले आओ। हनुमान पवन-सुत थे। बड़े वेग से आकाश मार्ग से चल पड़े। लेकिन शिवलिंग की स्थापना की नियत घड़ी पास आ गई। हनुमान का कहीं पता न था। जब सीताजी ने देखा कि हनुमान के लौटने मे देर हो रही है, तो उन्होने समुद्र के किनारे के रेत को मुट्ठी में बांधकर एक शिवलिंग बना दिया। यह देखकर राम बहुत प्रसन्न हुए और नियम समय पर इसी शिवलिंग की स्थापना कर दी। छोटे आकार का सही शिवलिंग रामनाथ कहलाता है।

बाद में हनुमानजी  के आने पर पहले छोटे प्रतिष्ठित छोटे शिवलिंग के पास ही श्री राम ने काले पत्थर के उस बड़े शिवलिंग को स्थापित कर दिया। ये दोनों शिवलिंग इस तीर्थ के मुख्य मंदिर में आज भी पूजित हैं। यही मुख्य शिवलिंग ज्योतिर्लिंग है।

# घुश्मेश्वर

घुश्मेश्वर को लोग घुसृणेश्वर और घृष्णेश्वर भी कहते हैं। घृष्णेश्वर से लगभग आठ किलोमीटर दूर दक्षिण में एक पहाड़ की चोटी पर दौलताबाद का क़िला मौजूद है। यहाँ पर भी धारेश्वर शिवलिंग स्थित है। यहीं पर श्री एकनाथ जी के गुरु श्री जनार्दन महाराज जी की समाधि भी है।महाराष्ट्र में औरंगाबाद के नजदीक दौलताबाद से 11 किलोमीटर दूर घृष्णेश्वर महादेव का मंदिर स्थित है। यह बारह ज्योतिर्लिंगों में से एक है। कुछ लोग इसे घुश्मेश्वर के नाम से भी पुकारते हैं।

इस मंदिर का निर्माण देवी अहिल्याबाई होल्कर ने करवाया था। शहर से दूर स्थित यह मंदिर सादगी से परिपूर्ण है। द्वादश ज्योतिर्लिंगों में यह अंतिम ज्योतिर्लिंग है। इसे घुश्मेश्वर, घुसृणेश्वर या घृष्णेश्वर भी कहा जाता

है। यह महाराष्ट्र प्रदेश में दौलताबाद से बारह मीर दूर वेरुलगाँव के पास स्थित है।

इस मंदिर का जीर्णोद्धार सर्वप्रथम 16 वीं शताब्दी में वेरुल के ही मालोजी राजे भोंसले (छत्रपति शिवाजी महाराज के दादा) के द्वारा तथा पुनः 18 वीं शताब्दी में इंदौर की महारानी पुण्यश्लोका देवी अहिल्याबाई होलकर के द्वारा करवाया गया था जिन्होंने वाराणसी के काशी विश्वनाथ मंदिर तथा गया के विष्णुपद मंदिर तथा अन्य कई मंदिरों का जीर्णोद्धार करवाया था। प्राचीन हिन्दू धर्मग्रंथों में इसे कुम्कुमेश्वर के नाम से भी संदर्भित किया गया है। इस मंदिर को इसके चित्ताकर्षक शिल्प के लिए भी जाना जाता है। यदि क्रम की बात करें तो हिन्दुओं के लिए घृष्णेश्वर ज्योतिर्लिंग की यात्रा का मतलब होता है बारह ज्योतिर्लिंग यात्रा का समापन। घृष्णेश्वर दर्शन के बाद द्वादश ज्योतिर्लिंग यात्रा को पूर्णता प्रदान करने के लिए श्रद्धालु काठमांडू, (नेपाल) स्थित पशुपतिनाथ के दर्शन के लिए जाते हैं।

घृष्णेश्वर मंदिर एलोरा गुफाओं से मात्र 500 मीटर की दुरी पर तथा औरंगाबाद से 30 किलोमीटर की दुरी पर स्थित है। औरंगाबाद से घृष्णेश्वर का 45 मिनट का सफ़र यादगार होता है क्योंकि यह रास्ता नयनाभिराम सह्याद्री पर्वत के सामानांतर दौलताबाद, खुलताबाद और एलोरा गुफाओं से होकर जाता है। घृष्णेश्वर मंदिर शिल्प: घृष्णेश्वर मंदिर बड़ा ही सुन्दर मंदिर है तथा इसके चारों ओर का वातावरण भी रमणीय है। यह मंदिर प्राचीन हिन्दू शिल्पकला का एक बेजोड़ नमूना है। इस मंदिर में तिन द्वार हैं एक महाद्वार तथा दो पक्षद्वार। मंदिर प्रवेश से पहले श्रद्धालु कुछ देर कोकिला मंदिर में रुकते हैं, यहाँ माता के हाथ ऊपर की ओर उठे हुए हैं जो भगवान शिव को श्रद्धालुओं के आगमन की सुचना देते प्रतीत होते हैं। गर्भगृह के ठीक सामने एक विस्तृत सभाग्रह है, सभा मंडप मजबूत पाषाण स्तंभों पर आधारित है इन स्तंभों पर सुन्दर नक्काशी की हुई है जो मंदिर की सुन्दरता को द्विगुणित करती है। सभामंड़प में पाषाण की ही नंदी जी की मूर्ति स्थित है जो की ज्योतिर्लिंग के ठीक सामने है।

मंदिर के अर्धउंचाई के लाल पत्थर पर दशावतार के द्रश्य दर्शानिवाली तथा अन्य अनेक देवी देवताओं की मूर्तियाँ खुदवाई गई हैं। 24 पत्थर के खम्भों पर सभामंड़प बनाया गया है। पत्थरों पर अति उत्तम नक्काशी उकेरी गई है। मंडप के मध्य में कछुआ है और दिवार की कमान पर गणेशजी की मूर्ति है। श्री जयराम भाटिया नाम के गुजरती भक्त ने मंदिर को सोने का पता लगाया हुआ ताम्र कलश भेंट किया है जो मंदिर की शोभा को चार चाँद लगाता प्रतीत होता है।

कुछ ऐसे भी लोग है, जो एलोरा कैलास मन्दिर को घुश्मेश्वर का प्राचीन स्थान मानते हैं। यहाँ के अति प्राचीन स्थानों में श्री घृष्णेश्वर शिव और देवगिरि दुर्ग के मध्य में स्थित सहस्रलिंग, पातालेश्वर व सूर्येश्वर हैं। इसी प्रकार सूर्य कुण्ड तथा शिव कुण्ड नामक सरोवर भी अति प्राचीन हैं। इस पहाड़ी की प्राकृतिक बनावट भी कुछ ऐसी ही है, जो सबके मन को अपनी ओर खींच लेती है। शिव पुराण के ज्ञान संहिता में लिखा है–

ईदृशं चैव लिंग च दृष्ट्वा पापै: प्रमुच्यते।
सुखं संवर्धते पुंसां शुक्लपक्षे यथा शशी।।
अर्थात् 'घुश्मेश्वर महादेव के दर्शन करने से सभी प्रकार के पाप नष्ट हो जाते हैं तथा उसी प्रकार सुख-समृद्धि होती है, जिस प्रकार शुक्ल पक्ष में चन्द्रमा की।'

<u>शिव महापुराण के अनुसार</u>

श्री शिवमहापुराण में घुश्मेश्वर ज्योतिर्लिंग की कथा इस प्रकार बतायी गई है– 'अद्भुत तथा नित्य परम शोभा सम्पन्न देवगिरि नामक पर्वत दक्षिण दिशा में अवस्थित है। उस पर्वत के समीप में भारद्वाज कुल में उत्पन्न एक सुधर्मा नामक ब्रह्मवेत्ता (ब्रह्म को जानने वाला) ब्राह्मण निवास करते थे। सदा शिव धर्म के पालन में तत्पर रहने वाली उनकी पत्नी का नाम सुदेहा था। वह कुशलतापूर्वक अपने घर के कार्यों को करती हुई पति की भी सब प्रकार से सेवा करती थी। ब्राह्मण श्रेष्ठ सुधर्मा भी देवताओं तथा अतिथियों

के पूजक थे। वे वैदिक सनातन धर्म के नियम का अनुसरण करते हुए नित्य अग्निहोत्र करते थे। त्रिकाल सन्ध्या (सुबह, दोपहर और शाम) करने के कारण उनके शरीर की कान्ति सूर्य की भाँति उद्दीप्त हो रही थी। वेद शास्त्रों के मर्मज्ञ (ज्ञाता) होने के कारण वे शिष्यों को पढ़ाया भी करते थे। वे धनवान तथा दानी भी थे। वे सज्जनता तथा विविध सद्गुणों के अधिष्ठान अर्थात पात्र थे। स्वयं शिव भक्त होने के कारण सदा शिव जी की आराधना में लगे रहते थे, तथा उन्हें शिव भक्त परम प्रिय थे। शिव भक्त भी उन्हें बड़ा प्रेम देते थे।

इतना सब कुछ होने पर भी सुधर्मा को कोई सन्तान न थी। यद्यपि उस ब्रह्मवेत्ता ब्राह्मण का कोई कष्ट न था, किन्तु उनकी धर्मपत्नी सुदेहा बड़ी दु:खी रहती थी। उसके पड़ोसी तथा अन्य लोग भी उसे नि:सन्तान होने का ताना मारा करते थे, जिसके कारण अपने पति से बार-बार पुत्र प्राप्ति हेतु प्रार्थना करती थी। उसके पति उस मिथ्या संसार के सम्बन्ध में उसे ज्ञान का उपदेश दिया करते थे, फिर भी उसका मन नहीं मानता था। उस ब्राह्मणदेव ने भी पुत्र प्राप्ति के लिए कुछ उपाय किये, किन्तु असफल रहे। उसके बाद अत्यन्त दु:खी उस ब्राह्मणी ने अपनी छोटी बहन घुश्मा के साथ अपने पति का दूसरा विवाह करा दिया। सुधर्मा ने द्वितीय विवाह से पूर्व अपनी पत्नी को बहुत समझाया था कि तुम इस समय अपनी बहन से प्यार कर रही हो, इसलिए मेरा विवाह करा रही हो, किन्तु जब इसे पुत्र उत्पन्न होगा,तो तुम उससे ईर्ष्या करने लगोगी। सुदेहा ने संकल्प लिया था कि वह कभी भी अपनी बहन से ईर्ष्या नहीं करेगी।

विवाह के बाद घुश्मा एक दासी की तरह अपनी बड़ी बहन की सेवा करती थी, तथा सुदेहा भी उससे अतिशय प्यार करती थी। अपनी बहन की शिव भक्ति से प्रभावित होकर उसके आदेश के अनुसार घुश्मा भी शिव जी का एक सौ एक पार्थिव लिंग (मिट्टी के शिवलिंग) बनाकर पूजा करती थी। पूजा करने के बाद उन शिवलिंगों को समीप के तालाब में विसर्जित कर देती थी–

कनिष्ठा चैव पत्नी स्वस्रनुज्ञामवाप्य च।
पार्थिवान्सा चकाराशु नित्यमेकोत्तरं शतम्।।

विधानपूर्वकं घुश्मा सोपचारसमन्वितम्।
वृत्वा तान्प्राक्षिपत्तत्र तडागे निकटस्थिते।।

एवं नित्यं सा चकार शिवपूजां सवकामदाम्।
विसृज्य पुनरावाह्य तत्सपर्याविधानत:।।

कुर्वन्त्या नित्यमेवं हि तस्या: शंकरपूजनम्।
लक्षसंख्याऽभवत्पूर्णा सर्वकाम फलप्रदा।।

कृपया शंकरस्यैव तस्या: पुत्रो व्यजायत।
सुन्दर: सुभगश्चैव कल्याणगुणभाजन:।।[1]

भगवान शंकर की कृपा से घुश्मा को एक सुन्दर भाग्यशाली तथा सद्गुण सम्पन्न पुत्र प्राप्त हुआ। पुत्र प्राप्ति से जब घुश्मा का कुछ मान बढ़ गया, तब सुदेहा को ईर्ष्या पैदा हो गई। समय के साथ जब पुत्र बड़ा हो गया, तो विवाह कर दिया गया और पुत्रवधू भी घर में आ गई। यह सब देखकर सुदेहा और अधिक जलने लगी। उसकी बुद्धि भ्रष्ट हो गई, जिसके कारण उसने अनिष्ट करने की ठान ली। एक दिन रात्रि में उसने सोते समय घुश्मा के पुत्र के शरीर को चाकू से टुकड़े-टुकड़े कर दिया और शव को समेटकर वहीं पास के सरोवर में डाल दिया, जहाँ घुश्मा प्रतिदिन पार्थिव लिंग का विसर्जन करती थी। सुदेहा शव को तालाब में फेंककर आ गई और आराम से घर में सो गई।

प्रतिदिन की भाँति घृश्मा अपने पूजा कृत्य में लग गई और ब्राह्मण सुधर्मा भी अपने नित्यकर्म में लग गये। सुदेहा भी जब सुबह उठी तो, उसके हृदय में जलने वाली ईर्ष्या की आग अब बुझ चुकी थी, इसलिए वह भी आनन्दपूर्वक घर के काम-काज में जुट गई। जब बहू की नींद खुली, तो

उसने देखा कि उसका पति बिस्तर पर नहीं है। बिस्तर भी ख़ून में सना है तथा शरीर के कुछ टुकड़े पड़े दिखाई दे रहे हैं। यह दृश्य देखकर दु:खी बहू ने अपनी सास घुश्मा के पास जाकर निवेदन किया और पूछा कि आपके पुत्र कहाँ गये हैं? उसने रक्त से भीगी शैय्या की स्थिति भी बताई और विलाप करने लगी– 'हाय मैं तो मारी गयी। किसने यह क्रूर व्यवहार किया है?' इस प्रकार वह पुत्रवधू करुण विलाप करती हुई रोने लगी।

सुधर्मा की बड़ी पत्नी सुदेहा भी उसके साथ 'हाय!' ऐसा बोलती हुई शोक में डूब गई। यद्यपि वह ऊपर से दु:ख व्यक्त कर रही थी, किन्तु मन ही मन बहुत प्रसन्न थी। अपनी प्रिय वधू के कष्ट और क्रन्दन (रोना) को सुनकर भी घुश्मा विचलित नहीं हुई और वह अपने पार्थिव-पूजन व्रत में लगी रही। उसका मन बेटे को देखने के लिए तनिक भी उत्सुक नहीं हुआ। इसी प्रकार ब्राह्मण सुधर्मा भी अपने नित्य पूजा-कर्म में लगे रहे। उन दोनों ने भगवान के पूजन में किसी अन्य विघ्न की चिन्ता नहीं की। दोपहर को जब पूजन समाप्त हुआ, तब घुश्मा ने अपने पुत्र की भयानक शैय्या को देखा। देखकर भी उसे किसी प्रकार का दु:ख नहीं हुआ।

उसने विचार किया, जिसने मुझे यह पुत्र दिया है, वे ही उसकी रक्षा भी करेंगे। वे तो भक्तप्रिय हैं, कालों के भी काल हैं तथा सत्पुरुषों के मात्र आश्रय हैं। वे ही सर्वेश्वर प्रभु हमारे भी संरक्षक हैं। वे माला गूँथने वाले माली की तरह जिनको जोड़ते हैं, उन्हें अलग-अलग भी करते हैं। मैं अब चिन्ता करके क्या कर सकती हूँ। इस प्रकार सांसारिक तत्त्वों का विचार कर उसने शिव के भरोसे धैर्य धारण कर लिया, किन्तु शोक का अनुभव नहीं किया।

प्रतिदिन की तरह वह 'नम: शिवाय' का उच्चारण करती हुई उन पार्थिव लिंगों को लेकर सरोवर के तट पर गई। जब उसने पार्थिव लिंगों को तालाब में डालकर वापस होने की चेष्टा की, तो उसका अपना पुत्र उस सरोवर के किनारे खड़ा हुआ दिखाई पड़ा। अपने पुत्र को देखकर घुश्मा के मन में न तो प्रसन्नता हुई और न ही किसी प्रकार का कष्ट हुआ। इतने

में ही परम सन्तुष्ट ज्योति: स्वरूप महेश्वर शिव उसके सामने प्रकट हो गये।

भगवान शिव ने कहा कि 'मै' तुम पर बहुत प्रसन्न हूँ, इसलिए तुम वर माँगो। तुम्हारी सौत ने इस बच्चे को मार डाला था, अत: मैं भी उसे त्रिशूल से मार डालूँगा। घुश्मा ने श्रद्धा-निष्ठा के साथ महेश्वर को प्रणाम किया और कहा कि सुदेहा मेरी बड़ी बहन है, कृपया आप उसकी रक्षा करे। शिव ने कहा कि सुदेहा ने तुम्हारा बड़ा अनिष्ट किया है, फिर तुम उसका उपकार क्यों करना चाहती हो? वह दुष्टा तो सर्वदा मार डालने के योग्य है। 'घुश्मा' हाथ जोडकर प्रार्थना करने लगी– 'देव! आपके दर्शन मात्र से सारे पातक भस्म हो जाते हैं। हमने तो ऐसा ही सुना है कि अपकार करने वाले (अनिष्ट करने वाले) पर जो उपकार करता है, उसके भी दर्शन से पाप बहुत दूर भाग जाता है। सदाशिव जो कुकर्म करने वाला है, वही करे, भला मैं दुष्कर्म क्यों करूँ? मुझे तो बुरा करने वाले की भी भलाई करना ही अच्छा लगता है।'

भगवान शिव घुश्मा के भक्तिपूर्ण विकार शून्य स्वभाव से अत्यन्त प्रसन्न हो उठ। दयासिन्धु महेश्वर ने कहा– 'घुश्मा! तुम्हारे हित के लिए मैं तुम्हें कोई वर अवश्य दूँगा। इसलिए तुम कोई और वर माँगो।' उसने कहा– 'महादेव! यदि आप मुझे वर देना ही चाहते हैं, तो लोगों की रक्षा और कल्याण के लिए आप यहीं सदा निवास करें और आपकी ख्याति मेरे ही नाम से संसार में होवे'–

सोवाच तद्वच: श्रुत्वा यदि देयो वरस्त्वया।
लोकानां चैव रक्षार्थमत्र स्थेयं मदाख्यया।।

तदोवाच शिवस्तत्र सुप्रसन्नो महेश्वर:।
स्थास्येऽत्र तव नाम्नाहं घुश्मेशाख्य: सुखप्रद:।।

घुश्मेशाख्यं सुप्रसद्धि लिंग में जायतां शुभम्।

इदं सरस्तु लिंगानामालयं जायतां सदा।।

तस्यामच्छिवालयं नाम प्रसिद्धं भुवनत्रये।
सर्वकामप्रदं ह्योयद्दर्शनात्स्यात्सदा सर:।।

घुश्मा की प्रार्थना और वर-याचना से प्रसन्न महेश्वर शिव ने उससे कहा कि मैं सब लोगों को सुख देने के लिए हमेशा यहाँ निवास करूँगा। मेरा ज्योतिर्लिंग 'घुश्मेश' के नाम से संसार में प्रसिद्ध होगा। यह सरोवर भी शिवलिंग का आलय अर्थात् घर बन जाएगा और इसीलिए यह संसार में शिवालय के नाम से प्रसिद्ध होगा। इस सरोवर का दर्शन करने से सब प्रकार के अभीष्ट प्राप्त होंगे।

भगवान शिव ने आशीर्वचन बोलते हुए घुश्मा से कहा कि तुम्हारे एक सौ एक पीढ़ियों तक ऐसे ही श्रेष्ठ पुत्र उत्पन्न हुआ करेंगे। वे सभी सन्तानें उत्तम गुणों से सम्पन्न, सुन्दरी स्त्रियाँ, धन-वैभव, विद्या-बुद्धि और दीर्घायु से युक्त होंगे। वे भोग और मोक्ष दोनों प्रकार के लाभ पाने के पात्र होंगे। तुम्हारे एक सौ एक पीढ़ियों तक वंश का विस्तार शोभादायक, यशस्वी तथा आनन्दवर्द्धक होगा' इस प्रकार घुश्मा को वरदान देते हुए भगवान शिव ज्योतिर्लिंग के रूप में वहीं स्थित हो गये। 'घुश्मेश' नाम से उनकी प्रसिद्धि हुई और सरोवर भी शिवालय के नाम से विख्यात हुआ।

सुधर्मा, घुश्मा तथा सुदेहा ने भी उस शिवलिंग की तत्काल एक सौ एक परिक्रमा दाहिनी ओर से की। पूजा करने के बाद परिवार के सभी सदस्यों के मन की मलीनता दूर हो गई। पुत्र को जीवित देखकर सुदेहा बड़ी लज्जित हुई और उसने अपने पति तथा बहन घुश्मा से क्षमा याचना कर प्रायश्चित के द्वारा पाप का शोधन किया। इस प्रकार घुश्मेश्वर ज्योतिर्लिंग का आविर्भाव हुआ, जिसका दर्शन और पूजन करने से सब प्रकार के सुखों की वृद्धि होती है। जगद्गुरु आदि शंकराचार्य ने घुश्मेश्वर ज्योतिर्लिंग की प्रार्थना इस प्रकार की है–

इलापुरे रम्याविशालकेऽस्मिन्।
समुल्लसन्तं च जगदवरेण्यम्।।

वन्दे महोदारतरस्वभावं।
घुश्मेश्वराख्यं शरणं प्रपद्ये।।

पहुँचने के साधन

श्री घुश्मेश्वर ज्योतिर्लिंग भारत के महाराष्ट्र प्रांत में दौलताबाद स्टेशन से बारह मील दूर अवस्थित है। यह घुश्मेश्वर मन्दिर वेरूल गाँव के पास है, जो दौलताबाद रेलवे-स्टेशन से लगभग अठारह किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। यहाँ मध्य रेलवे के मनमाड-पूना मार्ग पर मनमाड से लगभग 100 किलोमीटर पर दौलताबाद स्टेशन पुणे पड़ता है। दौलताबाद से आगे औरंगाबाद रेलवे-स्टेशन है। यहाँ से वेरूल जाने का अच्छा मोटरमार्ग है, जहाँ से विविध प्रकार के वाहन सुलभ होते हैं। दौलताबाद से वेरूल का मार्ग पहाड़ी है, उसकी प्राकृतिक शोभा बड़ी मनोहारी है।

ॐ नमः शिवाय बोलो ॐ नमः शिवाय

**संकलनकर्ता:**

श्रीमती हिरनमई

सचिव

श्री हिंदू धर्म वैदिक एजुकेशन फाउंडेशन

www.shdvef.com

**।।ॐ नमो भगवते वासुदेवाय:।।**